संशोधित आलेख

उत्तर प्रदेश

राज्य पर्यावरण नीति

2010

पर्यावरण विभाग,
उत्तर प्रदेश शासन
लखनऊ

उत्तर प्रदेश राज्य पर्यावरण नीति, 2010

प्रस्तावना

प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित पंच पदार्थ – क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर ही पर्यावरण का मुख्य ढाँचा बनाते हैं। मिट्‌टी, जल, वायु और जीव–जन्तु इत्यादि सभी पर्यावरण के अंग है। जब किन्हीं कारणों से इनका आपसी तालमेल बिगड़ जाता है, तो पर्यावरण का सन्तुलन भी बिगड़ जाता है। मानव अस्तित्व के लिए पर्यावरण को सुरक्षित रखने हेतु विश्वव्यापी समस्याओं से चिंतित होकर ही संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 1972 में 5 से 15 जून तक स्टाकहोम में मानव पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन किया गया था और उसमें घोषणा की गयी कि "मानव को स्वतंत्रता, समानता और जीवन की उपयुक्त दशाओं के साथ गुणवत्ता युक्त पर्यावरण में सम्मानजनक और खुशहाल जीवन जीने का मौलिक अधिकार है तथा वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए पर्यावरण की सुरक्षा और संवर्धन करना मानव का परम कर्तव्य है।" स्टाकहोम सम्मेलन के तत्काल बाद हमारे देश में पर्यावरण की सुरक्षा हेतु अनेक कदम उठाये गये।

पर्यावरण की रक्षा के लिए आवश्यक प्राविधान किये जाने हेतु वर्ष 1976 में संविधान में 42वें संशोधन के माध्यम से राज्य की नीति के निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 48–क और नागरिकों के मूल कर्तव्यों में अनुच्छेद 51–क (छ) का समावेश किया गया। अनुच्छेद 48–क द्वारा राज्य का यह कर्तव्य निर्धारित किया गया कि ''राज्य देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा''। इसके साथ ही अनुच्छेद 51–क(छ) में प्रत्येक नागरिक को यह दायित्व सौंपा गया गया कि ''वह प्राकृतिक पर्यावरण, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, की रक्षा करे और उसका संवर्घन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे।'' अतः राज्य सरकार तथा नागरिकों को अपनी–अपनी जिम्मेदारी समझते हुये पर्यावरणीय गुणवत्ता को बनाये रखने तथा उसमें बढ़ोत्तरी के प्रति निरन्तर प्रयास करना होगा।

प्रदेश में पर्यावरणीय अपघटन की रोकथाम एवं सतत् विकास सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न सेक्टोरल और क्रास–सेक्टोरल पहलुओं को साझे दृष्टिकोण से अपनाने के लिए यह आवश्यक है कि पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन हेतु एक दीर्घकालिक पर्यावरण नीति तैयार की जाय ताकि हमारे प्राकृतिक संसाधन वर्तमान पीढ़ियों की आवश्कताओं की पूर्ति के साथ ही साथ भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रह सकें। राज्य के वर्तमान एवं भावी विकास कार्यक्रमों में अवरोध उत्पन्न किये बिना पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के लिये मार्ग प्रशस्त करने हेतु प्रदेश के लिये एक व्यापक पर्यावरण नीति बनाये जाने की आवश्यकता है। आशा है कि उत्तर प्रदेश राज्य पर्यावरण नीति, 2010 प्रदेश में स्वच्छ एवं सन्तुलित पर्यावरण बनाये रखने में सार्थक सिद्ध होगी।

2.0 प्रदेश की पर्यावरणीय समस्यायें – एक परिदृश्य

मानव अपने जीविकोपार्जन के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता है। प्रारम्भ में मानव अपने पर्यावरण से प्राप्त वनस्पतियों एवं पशुओं पर निर्भर था। कालान्तर में मनुष्य ने आग जलाना सीख लिया और उसी क्षण से पर्यावरण का प्रदूषण शुरू हो गया। प्रारम्भ में यह प्रदूषण मनीषियों के लिए चिन्तन का विषय नहीं था, उस समय मानव की आबादी बहुत कम थी, जनसंख्या में निरन्तर वृद्वि के कारण संसाधनों की माँग में अप्रत्याशित वृद्वि हो रही है। प्राकृतिक संसाधनों के अनियोजित और अनियंत्रित उपयोग की दौड़ ने यह आशंका उत्पन्न कर दी है कि कहीं हमारे प्राकृतिक संसाधन शीघ्र ही समाप्त न हो जाएं और पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह न लग जाए ।

पर्यावरण अपघटन की समस्याएं जटिल चुनौतियाँ बनकर हमारे सामने आ रही हैं। विकास, वैभव एवं विलासिता के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग करके अमीर समाज और अमीर देश पर्यावरण को क्षति पहुँचाते हैं। इसके विपरीत गरीब समाज और गरीब देशों में अधिकांश लोग अपने जीवन यापन हेतु प्रकृति पर ही निर्भर रहकर प्राकृतिक संसाधनों पर अत्यधिक दबाव उत्पन्न करते हैं। यदि गरीब लोग जीवन यापन हेतु अपने पर्यावरण को नष्ट करने के लिए मजबूर किए जाते रहेंगे, तो सभी को इसके दूरगामी परिणाम भुगतने होंगे।

पर्यावरण को अपघटित करने में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या, प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन, अनियोजित औद्योगीकरण व नगरीकरण, वाहनों की निरन्तर बढ़ती संख्या, नदियों, झीलों व तालाबों इत्यादि में गिरते औद्योगिक व नगरीय उत्प्रवाह व कूड़ा–कचरा, रसायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के खेती में असंतुलित उपयोग व बढ़ते उपभोक्तावाद की प्रमुख भूमिका है। वायु, जल, मृदा व ध्वनि प्रदूषण, भूक्षरण, भूस्खलन, चारे और ईंधन की कमी जैसी विविध बहुआयामी एवं दूरगामी प्रभाव वाली पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। हमारा प्रदेश भी विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं जैसे वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, जनसंख्या वृद्धि, भूमि की उर्वरता तथा उत्पादकता में गिरावट, खेती में कीटनाशकों और रसायनों का प्रयोग, भूगर्भ जल का अति दोहन, वनों की कमी, जैव विविधता पर संकट, नम भूमि का अपघटन, ग्रामीण लोगों का शहरों की ओर पलायन और मलिन बस्तियों का प्रसार, नगरीय, जैव चिकित्सकीय एवं परिसंकटमय औद्योगिक अपशिष्टों का निस्तारण, नगरीय क्षेत्रों में वाहन प्रदूषण, जल प्रदूषण, स्वच्छ पेयजल की कमी, ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि के फलस्वरूप जलवायु परिवर्तन इत्यादि से प्रभावित है। प्रदेश की विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं तथा उनके कुप्रभावों का विवरण परिशिष्ट–2 में अभिलिखित है।

हमारे प्रदेश में पर्यावरणीय समस्याएं मूलतः दो कारणों से पैदा हो रही हैं। पहला कारण विकास गतिविधियों जैसे सघन कृषि, प्रदूषणकारी उद्योग और अनियोजित एवं अनियंत्रित शहरीकरण इत्यादि के ऋणात्मक प्रभावों से उत्पन्न पर्यावरणीय गिरावट जैसे वायु, जल, मृदा और वनस्पति एवं जन्तु सम्पदा की स्थिति से जुड़ा हुआ है। दूसरा कारण अनियंत्रित जनसंख्या, गरीबी, अशिक्षा, पिछड़ेपन एवं संसाधनों की कमी से जुड़ा हुआ है। गरीब वर्ग को जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर रहना पड़ता है। इस वर्ग की पर्यावरण के सम्बन्ध में सोच उसके आस–पास के प्राकृतिक संसाधनों के निरन्तर दोहन तक ही सीमित है। संस्थागत प्रयासों के बावजूद यदि गरीबी उन्मूलन नहीं हुआ तो गरीबी स्वयं भी पर्यावरणीय अपघटन को बढ़ावा दे सकती है। यह सिद्ध हो चुका है कि गरीबी, जनसंख्या वृद्धि तथा पर्यावरणीय अपघटन परस्पर सहयोग करते हैं।

यह बात निरन्तर स्पष्ट होती जा रही है कि पर्यावरण की निम्न गुणवत्ता से मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। विश्व बैंक द्वारा किए गए अध्ययन के अंतर्गत वायु एवं जल प्रदूषण के कारण प्रदेश में प्रत्येक वर्ष लगभग 94 लाख मानव वर्षों की क्षति का अनुमान लगाया गया है, जिसकी आर्थिक लागत लगभग रू0 6170 करोड़ आंकलित की गई है, जो कि वित्तीय वर्ष 2000–01 के प्रदेश के सकल घरेलू उत्पाद रू0 1091.56 अरब का 5.6: प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि घरेलू वायु प्रदूषण को कम करने, सुरक्षित पेय जल के श्रोतों की सुरक्षा, स्वच्छता उपाय, संशोधित सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रशासन प्रणाली, जैव विविधता संरक्षण संबंधी विभिन्न चिन्ताजनक समस्याओं की घटनाओं को कम करने हेतु प्रभावी अवसर प्रदान करने के लिए एक सुव्यवस्थित पर्यावरणीय प्रबन्धन की महती आवश्यकता है।

3.0 पर्यावरणीय नीतियॉ, अधिनियम और संस्थागत ढॉचा

जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत का क्षरण और वनों का कटान तथा जैव विविधता का क्षय जैसे पर्यावरणीय मुद्दे विश्वव्यापी पर्यावरणीय चुनौतियॉ उत्पन्न करते हैं। इन समस्याओं का हल राष्ट्रों और प्रदेशों के सामूहिक लेकिन अलग–अलग उत्तरदायित्व के सिद्धान्त को अपनाने से सम्भव है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इन विश्व व्यापी पर्यावरणीय समस्याओं के हल के लिए बहुपक्षीय प्रणालियॉ और कार्यक्रम प्रारम्भ किये हैं। हमारे देश ने कुछ प्रमुख पर्यावरणीय मुद्दों पर बहुपक्षीय समझौतों और संधियों में सहभागी बनकर समर्थन किया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की पहल के बाद सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण की सुरक्षा के बारे में प्रशासनिक, कानूनी एवं संस्थागत उपायों को लागू किया गया। हमारे देश में भी केन्द्र एवं राज्य स्तर पर विभिन्न नीतिगत, विधिक एवं संस्थागत उपाय किये गये हैं। केन्द्र सरकार द्वारा बनाए गए अधिकतर अधिनियमों एवं नीतियों के कियान्वयन का दायित्व राज्य सरकार के विभिन्न विभागों व उपकमों को सौंपा गया है। पर्यावरण संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण के कार्य को बढ़ाने हेतु बनाये गये प्रमुख नीतियों, अधिनियमों और नियमों का विवरण परिशिष्ट–1 में अभिलिखित है।

3.1 संस्थागत ढॉचा :

उ0 प्र0 सरकार द्वारा वर्ष 1976 में पर्यावरण निदेशालय की स्थापना की गयी, तब से यह अपने सीमित संसाधनों से पर्यावरणीय समस्याओं के वैज्ञानिक अध्ययन, उनके निदान तथा जनमानस में पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने हेतु कार्यरत एवं जागरूक है, ताकि प्रदेश में वांछित विकास के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन बनाए रखने की व्यवस्था सुनिश्चित की जा सके। पर्यावरण निदेशालय द्वारा मुख्यतः पर्यावरणीय शोध एवं क्रियान्वयन, पर्यावरणीय शिक्षा, प्रशिक्षण एवं जन जागरूकता संबंधी कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

भारत सरकार द्वारा जन स्वास्थ्य की सुरक्षा के उद्देश्य एवं प्रदूषण की गंभीरता को दृष्टिगत रखते हुए प्रदूषण जनित समस्याओं के प्रभावी निराकरण हेतु अधिनियमित जल (प्रदूषण निवारण तथा नियन्त्रण) अधिनियम, 1974 की धारा (4) के प्राविधानों के अन्तर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्य सरकार द्वारा वर्ष 1975 में ''उ0 प्र0 जल प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण बोर्ड'' का गठन किया गया था। वर्ष 1981 में भारत सरकार द्वारा अधिनियमित वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियन्त्रण) अधिनियम, 1981 की धारा–5 के प्राविधानों के अन्तर्गत जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम, 1974 के अन्तर्गत गठित राज्य बोर्ड को ही वायु प्रदूषण के निवारण तथा नियंत्रण का दायित्व सौंपा गया। वर्ष 1982 में राज्य सरकार द्वारा उक्त राज्य बोर्ड का नाम बदलकर ''उ0 प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड'' कर दिया गया। राज्य बोर्ड के वित्तीय संसाधन सुदृढ़ करने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा जल (प्रदूषण निवारण तथा नियन्त्रण) उपकर अधिनियम, 1977 पारित किया गया। भारत सरकार द्वारा पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 भी अधिनियमित किया गया, जिसके अन्तर्गत विविध प्राविधानों के अनुसरण में तत्सम्बन्धी शक्तियां भारत सरकार द्वारा राज्य बोर्ड को प्रदान की गई हैं।

पर्यावरण निदेशालय एवं उ0 प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अलावा प्रदेश के अन्य विभागों एवं सार्वजनिक उपक्रमों की भी पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके अन्तर्गत उद्योग, नगर विकास, पंचायती राज, गृह, वन, कृषि, शिक्षा, ऊर्जा, उद्यान, गन्ना, चिकित्सा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, नगर एवं ग्राम नियोजन, परिवहन, पर्यटन, पशुपालन, मत्स्य, भूतत्व एवं खनिकर्म, महिला कल्याण, लोक निर्माण, भूगर्भ जल, श्रम और सिंचाई विभागों तथा वैकल्पिक ऊर्जा विकास संस्थान, उ0 प्र0 राज्य औद्योगिक विकास निगम, उ0 प्र0 खनिज विकास निगम, उ0 प्र0 भूमि सुधार निगम, उ0 प्र0 मत्स्य विकास निगम, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद तथा सिंगरौली विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण इत्यादि का नाम उल्लेखनीय है।

4. उत्तर प्रदेश राज्य पर्यावरण नीति के उद्देश्यः–

उत्तर प्रदेश राज्य पर्यावरण नीति के मुख्य उद्देश्य जो प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों की वर्तमान अवधारणाओं से सम्बन्धित हैं और जो आने वाले समय में विकसित हो सकते हैं, निम्न प्रकार हैं :–

- प्रदेश वासियों को गुणवत्तायुक्त और स्वस्थ पर्यावरण में सम्मानजनक एवं खुशहाल जीवन प्रदान करना।
- पर्यावरण को क्षति पहुँचाये बिना वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्राकृतिक संसाधनों का सतत् एवं न्यायोचित उपयोग सुनिश्चित करना।
- राज्य के वर्तमान एवं भावी विकास कार्यक्रमों में अवरोध उत्पन्न किये बिना पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के लिए उपाय करना।
- आजीविका, आर्थिक प्रगति और मानव के व्यापक कल्याण हेतु पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों तथा प्राकृतिक व मानव निर्मित बहुमूल्य धरोहरों की सुरक्षा एवं संरक्षण के उपाय करना।
- प्रदेश के प्रत्येक वर्ग विशेषकर निर्धन वर्ग के लिए पर्यावरण संसाधनों को सुलभ बनाना और उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित करना।
- प्रदेश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास हेतु नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं में पर्यावरणीय पहलुओं का समावेश कराना।
- पर्यावरणीय अपघटन के प्रभाव को कम करने हेतु पर्यावरणीय संसाधनों के प्रयोग में कमी लाना।

- जनसामान्य को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने एवं पर्यावरण सुधार और संरक्षण में विभिन्न स्तरों पर जन सहभागिता सुनिश्चित करने हेतु उपाय करना।
- प्रदेश में पर्यावरणीय अपघटन और प्रदूषण नियंत्रण हेतु पर्यावरणीय शोध एवं विकास को प्रोत्साहन देना।
- प्रदेश की पर्यावरणीय समस्याओं का अध्ययन एवं उनके निदान हेतु उपाय करना।
- पर्यावरण की सुरक्षा हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा बनाये गये अधिनियमों, जारी अधिसूचनाओं तथा दिशा निर्देशों को सख्ती से एवं प्रभावी ढंग से पालन कराया जाना सुनिश्चित करना।

5. रणनीतिः–

मूलतः पर्यावरण एक क्रास सेक्टोरल मुद्दा है। प्रदेश की प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों के सम्बन्ध में विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावी कार्यवाही करके पर्यावरण नीति के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों को प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में इस दिशा में अनेक वर्षों से कार्यवाही चल रही है लेकिन कुछ अन्य क्षेत्रों में नये सिरे से पर्यावरणीय पहलुओं के नियोजन एवं क्रियान्वयन की आवश्यकता होगी। इस नीति के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु राज्य सरकार के सभी स्तरों यथा राज्य, मण्डल, जनपद, विकास खण्ड और ग्राम पंचायत स्तर पर कार्य योजना तैयार कर उनका क्रियान्वयन किया जाना होगा। पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार हेतु प्रदेश में पर्यावरण नीति के अन्तर्गत अपनाई जाने वाली रणनीति का विवरण निम्नवत है :–

5.1 विनियामक, प्रकिया सम्बन्धी तथा स्थायी सुधार :

- भारत सरकार द्वारा समय–समय पर विनियामक सुधार, प्रक्रिया सम्बन्धी सुधार तथा स्थायी सुधार सम्बन्धी सुझायी जाने वाली कार्यवाही का स्थानीय परिप्रेक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए उत्तर प्रदेश राज्य में पालन तथा राज्य स्तर पर भी स्थानीय परिस्थितियों और आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए सुधार की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाना।
- राज्य पर्यावरण नीति के उद्देश्यों की एक निश्चित समय सीमा में पूर्ति हेतु कार्य योजनाओं का विरचन और क्रियान्वयन (राज्य, जनपद, विकास खण्ड और ग्राम्य स्तर पर)।
- जन सामान्य तक पर्यावरण संबंधी जानकारी के प्रसार हेतु सूचना प्रौद्योगिकी आधारित संसाधनों का प्रयोग।
- प्रदेश में औद्योगिक एवं विकास परियोजनाओं की स्थापना एवं विस्तार आदि हेतु पूर्व–पर्यावरणीय सहमति जारी करने हेतु पर्यावरण एवं वन मंत्रालय भारत सरकार द्वारा गठित राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यॉकन समिति तथा राज्य स्तरीय पर्यावरण प्रभाव निर्धारण प्राधिकरण को सचिवालय के रूप में आवश्यक सहयोग एवं संसाधन उपलब्ध कराना।
- वृहद स्तर पर प्रमुख कृषि भूमि के भू प्रयोग परिवर्तन वाली परियोजनाओं का पर्यावरणीय प्रभाव विश्लेषण करना।
- पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों हेतु तैयार की जाने वाली क्षेत्रीय विकास की योजनाओं में स्थानीय समुदायों को सहभागी बनाना।
- पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों को पर्यावरण प्रबन्ध योजनाओं के अनुपालन के अनुश्रवण हेतु सक्षम बनाना। परियोजनाओं को बन्द करने के पश्चात पर्यावरण बहाली करना और अनुवर्ती अनुश्रवण हेतु संस्थागत प्रणाली का विकास करना।
- जलवायु परिवर्तन संबंधी राष्ट्रीय कार्य योजना के अन्तर्गत जलवायु परिवर्तन पर गुणवत्तापरक अनुसंधान का वित्त पोषण, जलवायु परिवर्तन के स्वास्थ्य एवं लोगों की जीविका पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, शैक्षिक एवं वैज्ञानिक संस्थाओं में जलवायु परिवर्तन को समर्पित प्रणाली की स्थापना, जलवायु परिवर्तन शोध कोष की स्थापना, चिन्हित केन्द्रों के माध्यम से नीति और क्रियान्वयन को सहयोग देने हेतु शोध तथा इस क्षेत्र में व्यक्तिगत क्षेत्र की सहभागिता सुनिश्चित करना।

5.2 पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण और संवर्धन

पर्यावरण संसाधनों के अपघटन पर नियंत्रण हेतु अपनाई जाने वाली रणनीति निम्नवत हैः–

5.2.1 भूमि

- व्यापक जन सहभागिता के माध्यम से परती तथा अपघटित भूमि के सुधार को प्रोत्साहित करने हेतु विविध उपाय करना।
- पर्यावरण संगत और परम्परागत भू उपयोग पद्धतियों को अपनाने के लिए कृषकों को प्रोत्साहित करने हेतु विविध उपाय करना।
- वानस्पतिक एवं अन्य विधियों द्वारा मरूस्थलीकरण की रोकथाम हेतु विशिष्ट उपाय करना। स्थानीय प्रजातियों पर आधारित वृक्षारोपण करना।
- कृषि भूमि का उपयोग सामान्यतः गैर कृषि कार्यों (सिंचाई परियोजनाओं को छोड़कर) हेतु न किया जाय। विकास योजनाओं के कियान्वयन एवं उद्योगों की स्थापना हेतु यथासम्भव ऊसर तथा बंजर भूमि का ही प्रयोग किया जाय। अपरिहार्य परिस्थितियों में यदि कृषि भूमि का उपयोग किया जाना अनिवार्य हो तो इसकी स्वीकृत शासन स्तर पर भू–उपयोग परिषद से प्राप्त की जाये। क्षतिपूरक वनीकरण के प्राविधान की भांति ही कृषि भूमि के गैर कृषि कार्यों में उपयोग की दशा में समान अपघटित भूमि को कृषि योग्य बनाये जाने के प्राविधान को लागू किया जाए।
- भूमि के प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक अपघटन को रोकने हेतु उपाय करना । कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने हेतु बायो–कम्पोस्टिंग तथा वर्मीकल्चर को बढ़ावा देना।
- भूमि की उर्वरता और उत्पादकता को बढ़ाने हेतु जैविक खाद के उपयोग को बढ़ावा देना। जैविक कीटनाशक, कृषि रसायनों के संतुलित उपयोग एवं उचित जल तथा भूमि प्रबन्धन द्वारा पर्यावरण संगत कृषि को बढ़ावा देना। कृषि वानिकी को प्रोत्साहित करना।
- भूमि की उत्पादकता में हो रही गिरावट में रोकथाम के लिए स्वयं सेवी संस्थाओं, कृषक समूहों और अन्य संस्थाओं के माध्यम से कृषकों के मध्य जागरूकता का प्रसार।

5.2.2 वन तथा वन्य जीव

(1) वन :

राष्ट्रीय वन नीति, 1988 तथा भारतीय वन अधिनियम एवं इसके तहत नियमों आदि में वन संरक्षण हेतु एक व्यापक आधार प्रदान किया गया है, फिर भी वन क्षति के कुछ कारणों पर ध्यान देते हुए निम्न उपाय किए जाने की आवश्यकता है :–

- प्रदेश के वर्तमान 9.01 प्रतिशत वनावरण/वृक्षावरण को वर्ष 2022 तक 20 प्रतिशत और अंततः राज्य वन नीति के अनुरूप तक बढ़ाने के लिए अपघटित वन भूमि, सामुदायिक भूमि, परती भूमि, निजी और राजस्व भूमि पर वनीकरण, बागवानी एवं कृषि वानिकी हेतु रणनीति तैयार कर व्यापक स्तर पर वृक्षारोपण किया जाए।
- वनों में रहने वाले आदिवासियों के पारम्परिक अधिकारों को कानूनी मान्यता दी जाय और वनों के प्रबन्धन में उन्हें भागीदार बनाया जाय।
- अपरिहार्य कारणोंवश वन भूमि को अन्य उपयोगों में लिए जाने पर वन संरक्षण अधिनियम, 1980 यथा संशोधित में दिये गये प्राविधानों के अनुसार वनों की पर्यावरणीय पुनर्स्थापना के आगणन हेतु उपयुक्त कार्यविधि विकसित की जाए।

- अवनत वनों के प्रबन्धन एवं सुरक्षा के कार्यक्रम में जन सहभागिता। अवनत वनों में संयुक्त वन प्रबन्धन के कार्यक्रमों का संचालन और वनों के अग्नि प्रबन्धन, चराई प्रबन्धन, प्राकृतिक पुनरोत्पादन, पंक्ति वृक्षारोपण और सामाजिक वानिकी इत्यादि के कार्यक्रम का भी जन सहभागिता के आधार पर संचालन। संरक्षित क्षेत्रों के उन्नत प्रबन्धन की दृष्टि से इनकी सीमाओं की परिधि में स्थित ग्रामों में इको डेवलपमेंट के कार्यक्रमों को प्रोत्साहन। प्राकृतिक वनों का घनत्व बढ़ाने तथा सभी जगह संयुक्त वानिकी प्रबन्धन हेतु जन निवेश पर बल देना। जिन क्षेत्रों में संयुक्त वन प्रबन्धन एवं इको डेवलपमेंट योजनायें कार्यान्वित की जा रही हैं, उन क्षेत्रों में अन्य विकास विभागों जैसे– सिंचाई, ग्राम्य विकास, पशुपालन एवं ग्रामीण अभियंत्रण इत्यादि के द्वारा संचालित योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है तो ग्राम का सर्वांगीण विकास सम्भव होगा और उससे वनों पर निर्भरता भी कम होगी। अतः उपयुक्त समन्वय के लिए प्रशासनिक व्यवस्था की जायेगी।
- सघन वनों के लिए ''उत्तम प्रबन्धन प्रणाली संहिता'' का गठन एवं कार्यान्वयन करना।
- वनों की सुरक्षा हेतु जनसहभागिता को बढ़ावा देना।
- प्रदेश में अवस्थित आरक्षित व संरक्षित वनों की सुरक्षा को शीर्ष प्राथमिकता देना।
- आम जनों की निर्भरता वनों/वृक्षारोपण पर न्यूनतम किये जाने की दृष्टि से प्रकाष्ठ के विकल्प के रूप में अन्य उपयुक्त उत्पादों को प्रतिस्थापित करने हेतु कार्यवाही करना।

(2) वन्य जीव :

- वन एवं वन्य जीवों की सुरक्षा में स्थानीय समुदायों को सहभागी बनाने हेतु उनकी आजीविका के लिए आर्थिक विकल्पों जैसे पारि–पर्यटन के विकास और वन उत्पाद (शाक, औषधीय पौधों और अन्य लघु उत्पाद) में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विशिष्ट पारि–विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना।
- प्रदेश के प्रत्येक जैव–भौगोलिक क्षेत्र में व्यापक जन सहभागिता से संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क का विस्तार करना।
- लुप्त प्राय एवं दुर्लभ प्रजातियों के संरक्षण और संवर्धन हेतु बंधक प्रजनन के लिए क्षमताओं को सुदृढ़ करना ।
- संरक्षित क्षेत्रों के बाहर पाये जाने वाले सभी वन्य जीवों और उनके प्राकृतवास का संरक्षण करना।
- पर्यावरणीय तथा पारि–पर्यटन लाभों को प्राप्त करने हेतु बहु–स्टेक होल्डर सहभागिता के समानान्तर, संरक्षित रिजर्व तथा सामुदायिक रिजर्वों में वन्य जीवों के वास–स्थलों में बढ़ोत्तरी करना।

5.2.3 जैव विविधता, पारम्परिक ज्ञान तथा प्राकृतिक धरोहर

- विकास एवं औद्योगिक परियोजनाओं से जैव विविधता तथा प्राकृतिक धरोहर पर पड़ने वाले स्पष्ट एवं गम्भीर प्रभावों का पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन।
- बौद्धिक सम्पदा अधिकार के आलोक में प्रदेश के वानिकी, कृषि, औद्यानिकी और पशुपालन इत्यादि क्षेत्रों में विद्यमान जैव विविधता का एक आन लाइन डाटा बेस तैयार करना।
- दुर्लभ एवं लुप्तप्रायः जीव प्रजातियों के संरक्षण एवं संवर्धन के साथ–साथ उनके जेनेटिक पदार्थों के संरक्षण के उपाय करना। आरक्षित वन क्षेत्रों की सुरक्षा एवं संवर्धन हेतु उपाय करना। परम्परागत पद्धति के माध्यम से उपलब्ध जेनेटिक संसाधनों का अभिलेखीकरण किया जाए।
- जैव विविधता की दृष्टि से संकटग्रस्त /संवेदनशील स्थलों की सुरक्षा के उपाय करना तथा साथ ही साथ जो स्थानीय समुदाय इससे प्रभावित हो सकते हैं उन्हें आजीविका के वैकल्पिक संसाधन उपलब्ध कराना।
- परम्परागत पद्धतियों के माध्यम से जैव विविधता के संरक्षण को बढ़ावा देना।
- जैव विविधता के संरक्षण से संबंधित नियमों और कानूनों का प्रभावी ढ़ग से अनुपालन सुनिश्चित कराना।
- प्रदेश में स्थानिक वनस्पति एवं जन्तु प्रजातियों के संरक्षण एवं उत्पादकता को बढ़ावा देना।
- जैव विविधता के प्रति जन संवेदना विकसित करने की दृष्टि से पारि–पर्यटन को बढ़ावा देना।

5.2.4 जल संसाधन

(1) नदी तंत्र

- सभी ऋतुओं में पानी का पर्याप्त बहाव तथा जल गुणवत्ता मानकों के अनुरूप बनाये रखने हेतु गंगा एवं सहायक नदियों के जल ग्रहण क्षेत्रों में पर्यावरणीय प्रबंधन के लिए एकीकृत ढंग से उपाय करना।
- गंगा,यमुना और गोमती तथा अन्य नदियों में उनके किनारे स्थित शहरों एवं कस्बों तथा उद्योगों से अनुपचारित उत्प्रवाह के डाले जाने पर प्रभावी ढ़ग से रोक लगाना।
- तापीय ऊर्जा संयंत्रों तथा अन्य उद्योगों से नदी के वनस्पतिजात तथा प्राणिजात एवं आजीविका के स्त्रोतों पर पड़ने वाले प्रभावों को नियन्त्रित करने हेतु उपाय करना।
- भूमि के कटाव की रोकथाम और हरित क्षेत्र में वृद्धि के लिए नदियों और जलाशयों के किनारों और जल ग्रहण क्षेत्रों में स्थानीय समुदायों के सहयोग से वृक्षारोपण हेतु विशिष्ट अभियान चलाना।
- नदी तटों के प्रबन्धन हेतु प्रदेश के समस्त संबंधित विभागों द्वारा एकीकृत दृष्टिकोण को अपनाना।

(2) भूजल :

- बेसिन कान्सेप्ट के आधार पर भू जल और सतही जल का संयोजित उपयोग किया जाये।
- भू जल स्तर के संवर्धन हेतु तालाबों, जलाशयों और झीलों को गहराकर उनकी जल भण्डारण क्षमता बढ़ाना तथा उन्हें अतिक्रमण से मुक्त कराना। भूमिगत जल रिचार्ज को बढ़ाने हेतु कन्टूर बन्डिंग तथा पारम्परिक तरीकों को प्रोत्साहित करना।
- नगरीय क्षेत्रों में 300 वर्ग मीटर या उससे अधिक क्षेत्रफल वाले भूखंडों पर निर्मित होने वाले भवनों में रेन वाटर हार्वेस्टिंग व्यवस्था को अनिवार्य बनाया जाना।शहरी क्षेत्रों में विकसित की जाने वाली कालोनियों में पुराने/नए जलाशयों को संरक्षित/विकसित करने की व्यवस्था लागू करना। भूमिगत जल रिचार्ज को बढ़ाने के उद्देश्य से वर्षा जल संचयन के मानक निर्धारित किए जायें तथा जल रिचार्ज की गुणवत्ता बनायी रखी जाय और उनका प्रभावी ढंग से अनुश्रवण किया जाए।
- जल के उपयोग में किफायत हेतु स्प्रिंक्लर तथा ड्रिप सिंचाई जैसी निपुण एवं प्रभावशाली तकनीकों को अपनाने हेतु किसानों को प्रोत्साहित करना।
- आर्सेनिक, फ्लोराइड, नाइट्रेट, लोहा तथा अन्य हानिकारक तत्वों को ग्रामीण पेयजल से अलग करने के लिए, लागत प्रभावी तकनीकों के विकास हेतु अनुसंधान और विकास को समर्थन देना। औद्योगिक एवं अन्य गतिविधियों के फलस्वरूप भू–जल प्रदूषण की गम्भीर समस्या से प्रभावित क्षेत्रों को चिन्हित कर निदानात्मक उपाय किए जाएं।
- रेन वाटर हार्वेस्टिंग तकनीकी के बारे में वेब आधारित सूचना प्रणाली का विकास करना।
- प्रदेश के भूजल स्तर में निरन्तर गिरावट वाले विकास खण्डों में भूजल के दोहन को नियंत्रित करने हेतु विधिक उपाय करना।
- गड़क और शारदा सहायक नहर समावेश क्षेत्रों में जल प्लावन की समस्या के निदान हेतु सतही और भूगर्भ जल के समन्वित उपयोग हेतु उपाय करना।

(3) नम भूमि

- प्रदेश में विद्यमान नम भूमियों की पहचान करना तथा एक स्टेट इन्वेन्ट्री बनाना।
- जलीय जीवों के संरक्षण हेतु जलीय पारितंत्र का संरक्षण किया जाना। पारिस्थितिकीय महत्व की सभी नम भूमियों को उनके पारिस्थितिकीय गुणों के समेत संरक्षित किया जाना तथा उनके जल समेट क्षेत्र के अपघटन को रोका जाना।

- राजस्व परिषद द्वारा चिन्हित की गई नम भूमियों के अपघटन को रोकने, उनका संरक्षण करने तथा अतिक्रमण से मुक्त करने के लिए एक विधिक विनियामक तंत्र स्थापित करना। ग्राम पंचायतों और नगर निकायों आदि को उनकी सीमान्तर्गत स्थित नम भूमियों के संरक्षण और प्रबन्धन हेतु उत्तरदायी बनाना।
- विशेष अनूठी नम भूमियों की सुरक्षा हेतु रणनीति का विकास करने में ''अतुलनीय मूल्य'' के रूप में उन पर विचार करना।
- प्रत्येक महत्वपूर्ण पहचान की गई नम भूमि के संरक्षण हेतु स्थानीय समुदायों तथा अन्य सुसंगत स्टेक होल्डर्स के सहयोग से संरक्षण और विवेकपूर्ण उपयोगी रणनीतियाँ प्रतिपादित करना।
- पहचान की गई नम भूमियों के लिए मल्टी स्टेक होल्डर सहभागिता के माध्यम से जनता, एजेन्सियों, स्थानीय समुदायों तथा निवेशकों को साथ लेकर 'पारि–पर्यटन' रणनीति बनाना तथा लागू करना।
- महत्वपूर्ण विकास परियोजनाओं के पर्यावरणीय आंकलन के दौरान परियोजनाओं के कारण नम भूमियों पर पड़ने वाले प्रभावों का स्पष्ट उल्लेख करना।
- राष्ट्रीय नम भूमि संरक्षण कार्यक्रम के तहत प्रदेश में चिन्हित 9 नम भूमियों के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु विशिष्ट उपाय करना।

5.2.5 प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण

(1) वायु प्रदूषण

- प्रदूषणकारी पुराने वाहनों के संचालन पर रोक लगाना।
- नगरीय क्षेत्र में भारी वाहनों के प्रवेश को नियमित/नियंत्रित किया जाना।
- यातायात प्रवाह में सुधार हेतु फ्लाई ओवर और अन्डर पास की व्यवस्था किया जाना। अवैध पार्किंग की रोकथाम हेतु प्रभावी उपाय करना। मार्गो को अतिक्रमण से मुक्त कराना। नगरों का एकीकृत ट्रैफिक प्लान तैयार किया जाय।
- समस्त वाहनों के लिए नियंत्रित प्रदूषण प्रमाणपत्र प्राप्त करने की व्यवस्था सुनिश्चित करना।
- वाहनों से होने वाले उत्सर्जन में कमी लाने हेतु भारत सरकार के मानकों के अनुरूप वाहन के निर्माण हेतु वाहन उद्योगों को निर्देशित करना।प्रदूषण नियंत्रण हेतु सी0एन0जी0 की आवश्यकता वाले जनपदों की प्राथमिकता का निर्धारण किया जाय तथा ईंधन की गुणवत्ता के सम्बन्ध में समय–समय पर भारत सरकार द्वारा निर्गत मानकों के अनुरूप कार्यवाही करने हेतु उचित निर्देश निर्गत किए जाएं एवं अति संवेदनशील प्रदूषणकारी क्षेत्रों में उद्योगों में गैस के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाए।
- नगरीय, औद्योगिक क्षेत्रों एवं पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों में वायु प्रदूषण के नियमित अनुश्रवण के उपाय करना तथा उनमें स्थानीय लोगों को सहभागी बनाना। प्रमुख नगरों में इस कार्य हेतु स्थानीय नगर निकायों को सक्षम बनाना।
- प्रदूषणकारी उद्योगों से जनित वायु प्रदूषण के प्रभावी अनुश्रवण एवं नियंत्रण हेतु उपाय सुनिश्चित किया जाना।
- समस्त प्रकार के अपशिष्टों जैसे नगरीय, घरेलू, औद्योगिक और जैव चिकित्सीय इत्यादि के संग्रह, परिवहन और वैज्ञानिक ढंग से निस्तारण हेतु उचित उपाय किया जाना।
- नगरीय क्षेत्रों में कोयला, केरोसिन, लकड़ी और बायोमास के प्रयोग को प्रतिबंधित करते हुए एल0पी0जी0 की शतप्रतिशत आपूर्ति की व्यवस्था किया जाना। ग्रामीण क्षेत्रों में बायोगैस, सोलर कुकर तथा उन्नत किस्म के चूल्हे के प्रयोग को प्रोत्साहन देना तथा एल0पी0जी0 की आपूर्ति की सुविधा का विस्तार किया जाना।
- वायु प्रदूषण के नियंत्रण हेतु पर्यावरण मित्र एवं लागत–प्रभावी संयंत्रों/प्रणालियों के विकास हेतु शोध को प्रोत्साहित करना।

- प्रदेश के प्रमुख नगरों एवं पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों में वायु प्रदूषण के नियंत्रण हेतु कार्य योजना तैयार व लागू करना। नगरों की महायोजना बनाते समय जोनिंग एटलस के पहलुओं को भी ध्यान में रखा जाय तथा 33 प्रतिशत भाग में हरित क्षेत्र का प्राविधान किया जाय। महायोजना का पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन कराया जाए।
- नगरीय क्षेत्रों में प्रदूषण की रोकथाम हेतु पर्याप्त सार्वजनिक और निजी निवेश सुनिश्चित करने हेतु प्रदेश कार्य नीति तैयार करना। स्थानीय लोगों को सहभागी बनाते हुए ऊर्जा के लिए ऊर्जा प्रजाति के पौधों के रोपड़ द्वारा परती भूमि के सुधार को बढ़ावा देना।

(2) जल प्रदूषण

- जल प्रदूषण के निवारण एवं नियंत्रण हेतु नियमित अनुश्रवण की व्यवस्था करना एवं स्थानीय लोगों को सहभागी बनाने हेतु कार्यनीति विकसित करना।
- प्रदेश की प्रमुख नदियों जैसे गंगा,यमुना, गोमती, राप्ती, रामगंगा,काली, हिन्डन और बेतवा इत्यादि में जल प्रदूषण के लिए उत्तरदायी स्त्रोतों की पहचान करना एवं प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण हेतु कार्य योजना (सीवेज उपचार संयंत्र, संयुक्त उत्प्रवाह उपचार संयंत्र,विद्युत शवदाह गृह, सामुदायिक शौचालय व स्नान घाटों का विकास/सुधार इत्यादि) विकसित कर क्रियान्वयन करना। गंगा कार्य योजना, यमुना कार्य योजना और गोमती कार्य योजना के अन्तर्गत अवशेष कार्यो को पूर्ण कराया जाना।
- प्रदूषणकारी उद्योगों को चिन्हित कर उनसे होने वाले जल प्रदूषण (सतही एवं भूजल) के प्रभावी अनुश्रवण एवं नियंत्रण हेतु उपाय सुनिश्चित किया जाना। भूजल एवं सतही जल की गुणवत्ता का एक डाटाबेस तैयार किया जाय तथा इस कार्य हेतु एक नोडल एजेन्सी का निर्धारण किया जाय।
- जल प्रदूषण के नियंत्रण हेतु पर्यावरण मित्र एवं लागत–प्रभावी उत्प्रवाह एवं सीवेज उपचार संयंत्रों/प्रणालियों के विकास हेतु शोध को प्रोत्साहित करना।
- नगरीय क्षेत्रों में सीवेज उपचार संयंत्रों की स्थापना व संचालन में सार्वजनिक–निजी क्षेत्र की सहभागिता को बढ़ावा देना। सीवेज उपचार प्रणालियों के उपभोग प्रभारों की वसूली हेतु नगर निकायों की क्षमता को बढ़ाना ।
- उपचारित मल, जल और औद्योगिक उत्प्रवाह को जल निकायों में प्रवाहित करने से पूर्व पुनः प्रयोग को बढ़ावा देना।
- प्रदूषणकारी लघु उद्योगों में लागत–वसूली आधार पर संयुक्त उत्प्रवाह उपचार संयंत्रों की स्थापना को बढ़ावा देने हेतु उपाय करना।
- कृषि निवेशों विशेषकर कीटनाशकों की मूल्य निर्धारण नीतियों में भूजल प्रदूषण का स्पष्ट विवरण लेना और उनके उपयोग पर आधारित शस्य प्रणालियों का प्रसार करना।
- प्रदेश में निर्मित होने वाली समस्त आवासीय परियोजनाओं में सीवेज उपचार संयंत्रों की व्यवस्था को सुनिश्चित किया जाना।
- नगरीय ठोस अपशिष्टों, जैव चिकित्सकीय अपशिष्टों एवं उद्योगों से जनित होने वाले परिसंकटमय ठोस अपशिष्टों के निस्तारण हेतु वांछित उपाय करना।
- उद्योगों की स्थापना हेतु जोनिंग एटलस तैयार कराया जाना तथा महायोजना में उनका समावेश कराया जाना।

(3) मृदा प्रदूषण

- परिसंकटमय अपशिष्ट ढेरों को हटाने हेतु रणनीतियाँ विकसित करना तथा उन्हें लागू करना , विशेषकर औद्योगिक क्षेत्रों में, तथा ऐसी भूमियों को सतत् उपयोग में लाने हेतु सुधार करना।
- उद्योग से जनित परिसंकटमय अपशिष्टों एवं जैव चिकित्सकीय अपशिष्टों के निस्तारण हेतु विभिन्न उपाय जैसे सुरक्षित लैंडफिल्स और भस्मीकरण संयंत्रों की व्यवस्था करना। इनकी स्थापना हेतु उपयोगकर्ताओं से शुल्क वसूल करके सार्वजनिक– निजी सहभागिता के व्यवहारिक माडलों को विकसित करना तथा लागू करना।

- विभिन्न अपशिष्ट पदार्थों को इकट्ठा करने वाले तथा पुनःचक्रण करने वाली अनौपचारिक सेक्टर प्रणालियों को सुदृढ़ बनाना तथा उन्हें विधिक मान्यता देना, विशेषरूप से उनकी संस्थागत वित्त और सुसंगत प्रौद्योगिकियों में पहुँच को बढ़ाना।
- नगरीय ठोस अपशिष्टों के कार्बनिक तथा अकार्बनिक अंश को पृथक–पृथक करके अकार्बनिक अंश के पुनः चक्रण और पुनः प्रयोग करने हेतु स्थानीय निकायों की क्षमताओं को सुदृढ़ करना तथा कार्बनिक अंश के प्रसंस्करण हेतु ऐसी विधि एवं उपाय को विकसित करना, जिसमें सेनेट्री लैण्ड फिल्स हेतु भूमि की न्यूनतम आवश्यकता पड़े। इस हेतु बाहरी प्रबन्धन सेवाओं में प्रतिस्पर्धा का सिद्धान्त अपनाना।
- पारम्परिक फसल की किस्मों की खेती को अनुसंधान के माध्यम से बढ़ावा देना। अपघटित भूमि, ऊसर भूमि तथा कृषि रसायनों के कारण प्रदूषित /प्रभावित भूमि के सुधार हेतु प्रौद्योगिकी का प्रसार। जैविक उपज के विपणन को बढ़ावा देना।
- प्लास्टिक अपशिष्टों के पुनः चक्रण, पुनः प्रयोग और अन्तिम रूप से पर्यावरण संगत निस्तारण हेतु रणनीतियों का विकास एवं क्रियान्वयन। इस हेतु सुसंगत प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना तथा इन्सेन्टिव आधारित संयंत्रों का प्रयोग करना।
- कीट एवं रोगों के नियंत्रण हेतु कृषि रक्षा रसायनों के प्रयोग के स्थान पर जैविक नियंत्रण/जैविक पेस्टीसाइड के प्रयोग एवं एकीकृत नाशी जीव प्रबन्धन को प्रोत्साहित करना।
- एकीकृत पौध तत्व प्रबंधन एवं जैविक उर्वरक यथा नाडेप, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, हरीखाद एवं जीवाणु उर्वरक को प्रोत्साहित करना।
- परिसंकटमय अपशिष्ट जनित करने वाली औद्योगिक इकाइयों और जैव चिकित्सकीय अपशिष्ट जनित करने वाली चिकित्सा इकाइयों तथा उनके द्वारा प्रयोग की जा रही अपशिष्ट निस्तारण सुविधाओं के विवरण का आन लाइन डाटा बेस तैयार किया जाना।

(4) ध्वनि प्रदूषण

- भारत सरकार द्वारा निर्धारित ध्वनि मानकों के प्रवर्तन के संदर्भ में लाउडस्पीकर और अन्य ध्वनि विस्तारक यंत्रों के उपयोग को नियमित करने के उपाय करना। इसके अलावा शान्त क्षेत्रों की पहचान कर ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण हेतु उपाय करना।
- परिवेशीय ध्वनि प्रदूषण के प्रभावी अनुश्रवण हेतु जनपद स्तर पर तंत्र विकसित करना।
- परिवेशीय ध्वनि मानकों के पालन में जन सहभागिता को प्रोत्साहित करने के उपाय करना।
- वाहनों में प्रेशर हार्न के प्रयोग पर प्रतिबन्ध लगाना।
- आवासीय, वाणिज्यिक और अन्य क्षेत्रों में केवल ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण व्यवस्था से युक्त जनरेटरों के ही प्रयोग को अनुमति देना ।
- ध्वनि प्रदूषण से होने वाली स्वास्थ्य समस्याओं के बारे में जन जागरूकता का प्रसार किया जाना।

5.2.6 मानव निर्मित ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक तथा पुरातात्विक महत्व की धरोहरों का संरक्षण

- मानव निर्मित धरोहरों की राज्य सूची का आन लाइन डाटा बेस तैयार करना।
- धरोहर स्थलों पर पड़ने वाले प्रभावों को ध्यान में रखते हुए वायु गुणता के गहन अनुश्रवण की व्यवस्था करना।
- 'अतुलनीय मूल्यवान' समझी जाने वाली धरोहरों के लिए पर्यावरण संगत एकीकृत क्षेत्रीय विकास योजनाओं का विरचन एवं क्रियान्वयन करना।
- उद्योग तथा विकास परियोजना की स्थापना से धरोहर स्थलों पर पड़ने वाले प्रभावों के ऑकलन हेतु पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की शर्तों में विशिष्ट समावेश किया जाना।

- पुरातात्विक महत्व की धरोहरों के समीप परियोजनाओं की स्थापना/अन्य क्रियाकलापों को प्रारम्भ करने के पूर्व परियोजना प्रस्तावक द्वारा पुरातत्व विभाग से भी सहमति प्राप्त किये जाने की व्यवस्था लागू किया जाना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित प्राचीन टीलों को खेती एवं आवास आदि के लिए पट्टा पर न दिया जाय। नगरीय क्षेत्र में स्थित ऐसे स्थलों को आवासीय समितियों को विक्रीत न किया जाये। प्रदेश के समस्त जिलों में उपलब्ध प्राचीन टीलों एवं पुरास्थलों पर अतिक्रमण को रोका जाय। उन्हें संरक्षित रखने हेतु उन पर घास एवं छोटी झाड़ियों का रोपण किया जाय। साथ ही इन्हें पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया जाय।
- प्रदूषण से बचाने हेतु प्राचीन स्मारकों के समीप कल/कारखाने न लगाये जायें ।
- प्रदेश में विकास संबंधी कोई भी योजना बनाते समय विद्यमान प्राचीन एवं ऐतिहासिक स्मारकों पर पर्यावरण प्रभाव मूल्यॉकन अनिवार्यतः कराया जाय।

5.3 पर्यावरणीय अपघटन का आर्थिक मूल्याँकन

- पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए विकास योजनाओं के क्रियान्वयन से या अन्य कारणों से होने वाले पर्यावरणीय अपघटन का आर्थिक मूल्याँकन कराने तथा उसकी भरपाई के लिए उतनी ही धनराशि पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यय किये जाने एवं अन्य ठोस उपाय किए जाने की व्यवस्था लागू की जाय।

5.4 पर्यावरण संगत विकास नीतियाँ

- संरक्षण और सतत् विकास के लक्ष्यों और उद्देश्यों के कार्यान्वयन के लिये विभिन्न क्षेत्रों में विकास की नीतियों और कार्यक्रमों में पर्यावरणीय पहलुओं का समावेश अपेक्षित होगा।
- पर्यावरण संरक्षण और स्थाई विकास के लिये विकास गतिविधियों के प्रमुख क्षेत्रों जैसे कृषि, सिंचाई, पशुपालन, वानिकी, ऊर्जा, परिवहन, पर्यटन, खनन और उत्खनन, औद्योगिक विकास और मानव बस्तियों के विकास इत्यादि में पर्यावरणीय पहलुओं के समावेश हेतु मार्गदर्शिकाओं का विकास किया जायेगा।

6. पर्यावरणीय प्रबन्धन, सहायक नीतियाँ एवं प्रणालियाँ

पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखने तथा पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार की पूर्ति हेतु पर्यावरण प्रबन्धन तथा सहायक नीतियाँ आवश्यक हैं, जिनका विवरण निम्नवत् है :–

6.1 पर्यावरणीय मानक

- भारत सरकार द्वारा समय–समय पर अधिसूचित परिवेशी और उत्सर्जन मानकों को स्थानीय परिप्रेक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रदेश में लागू किया जायेगा।
- परिवेशी पर्यावरण गुणता के अनुश्रवण हेतु नेटवर्क की सुदृढ़ बनाना जिसमें स्थानीय समुदायों और सार्वजनिक – निजी सहभागिता का माध्यम शामिल हो। अनुश्रवण ऑकड़ों का वास्तविक समय और उनकी आन – लाईन उपलब्धता सुनिश्चित की जायेगी।

6.2 पर्यावरणीय प्रबन्धन प्रणालियाँ, इकोलेबलिंग तथा प्रमाणन

- भारत सरकार द्वारा निर्धारित नीति का पालन किया जायेगा।
- पर्यावरण प्रबन्ध प्रणालियों यथा आई0एस0ओ0: 14001 के क्षेत्र में तकनीकी और प्रशिक्षण सहयोग हेतु क्षमता का विकास।
- पर्यावरण प्रबन्धन प्रणाली यथा आई0एस0ओ0 : 14001 को अंगीकार करने हेतु उद्योगों और उद्योग संघों को प्रोत्साहित करना।
- उत्पादों की इकोलेबेलिंग हेतु उद्योगों को प्रोत्साहित करना।
- प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, पर्यावरणीय कुप्रभावों में कमी, उर्जा दक्षता, ठोस अपशिष्ट प्रबन्ध और वायु, जल तथा ध्वनि प्रदूषण इत्यादि के आलोक में उद्योगों के लिए उत्तम पद्धति मानदंडों का विकास।

- उद्योगों में उत्तम पद्धति मानदंडों को बढ़ावा देना और उनकी परफार्मेन्स रेटिंग का मूल्यॉकन करना।
- पर्यावरणीय प्रबन्ध तंत्र का सुदृढ़ीकरण।

6.3 स्वच्छ प्रौद्योगिकी और नवीनीकरण

- स्वच्छ विकास कियाविधि परियोजनाओं की पहिचान और विरचन हेतु क्षमता का विकास।
- स्वच्छ विकास कियाविधि में भाग लेने हेतु प्रदेश के उद्योगों को उत्साहित करना।
- स्वच्छ प्रोद्योगिकी को अपनाने के उपरान्त उत्पादन क्षमता तथा पर्यावरण सुधार के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान उद्योगों का मूल्यॉकन करना।
- स्वच्छ, पर्यावरण–मित्र एवं कम–लागत प्रौद्योगिकी के शोध एवं विकास को प्रोत्साहन देना।

6.4 जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण :

प्रदेश की अबाध गति से बढ़ती हुई जनसंख्या न केवल विकास गतिविधियों पर आर्थिक बोझ को बढ़ाती है बल्कि समाज की आर्थिक समृद्धि को भी घटाती है। अतः हमारे नियोजन की सफलता के लिये जनसंख्या नियंत्रण अपरिहार्य हो गया है, जिसके लिये रहन–सहन को निखारने वाले विकास कार्यक्रमों के साथ–साथ जनसंख्या स्थिरीकरण को निम्नलिखित मदों के अंतर्गत दिशा–निर्देशित करने की आवश्यकता है :–

- ''छोटा–परिवार'' को एक सामाजिक उत्तरदायित्व बनाने के लक्ष्य के साथ जनसंख्या स्थिरीकरण के लिए एक समयबद्ध राज्य स्तरीय अभियान चलाना।
- महिला–शिक्षा, महिला–रोजगार एवं सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देना।
- परिवार नियोजन एवं स्वाथ्य–सुरक्षा के साधनों को सर्व सुलभ बनाना।
- रोगवाहक के उन्मूलन और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से पर्यावरणीय स्वच्छता एवं संक्रामक रोगों के निवारण और नियंत्रण के उपाय करना।
- घरेलू वायु प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्वास्थ्य आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान देने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में विकेन्द्रीकृत वैकल्पिक ऊर्जा संयंत्रों के प्रयोग को प्रोत्साहित करना।

6.5 पर्यावरणीय शिक्षा, प्रशिक्षण, जागरूकता एवं सूचना :

- औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से पर्यावरणीय जागरूकता का प्रसार।
- विशेष दायित्वों वाले समूहों अर्थात् न्याय पालिका, नीति निर्माता, विधायकों, प्रशासको, औद्योगिक प्रबन्धकों, नगर और क्षेत्रीय नियोजकों, स्वयंसेवी एवं स्वैच्छिक संगठनों/संस्थाओं और समुदाय आधारित संगठनों के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन।
- पर्यावरण प्रबन्ध एवं प्रदूषण नियंत्रण के विशिष्ट क्षेत्रों में निरन्तर हो रहे शोध एवं विकास के बारे में सरकारी एवं गैर सरकारी पर्यावरण प्रबन्धकों एवं स्कूल शिक्षकों को जानकारी देने हेतु पर्यावरण प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन।
- प्रिंट, इलेक्ट्रानिक तथा लाइव मीडिया (सांस्कृतिक दलों सहित) के माध्यम से सुदूर क्षेत्रों तक पर्यावरणीय जागरूकता का प्रसार। विभिन्न प्रकार के जागरूकता अभियानों एवं मनोरंजक पर्यावरण कार्यक्रमों जैसे वन मनोरंजन और ''इकोटूरिज्म'' आदि के द्वारा पर्यावरणीय चेतना का प्रसार ।
- प्रदेश के प्रत्येक गांव में पर्यावरण संरक्षण के बारे में जागरूकता बढ़ाने हेतु गॉव के शिक्षित युवक को पर्यावरण प्रशिक्षण देकर गॉव के **"पर्यावरण मित्र"** के रूप में नामित करना।
- जनता को प्रमुख पर्यावरणीय संसाधनों और प्रचालकों की जानकारी देने के उद्देश्य से एक आन लाइन, सामयिक तथा सार्वजनिक रूप से सुलभ पर्यावरणीय सूचना प्रणाली विकसित और प्रचालित करना।

6.6 जन सहभागिता :

- सामुदायिक नियंत्रण (पंचायती राज संस्थाओं) के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों के स्वपोषी एवं युक्तियुक्त उपयोग हेतु संरक्षण एवं प्रबन्धन को सुनिश्चित करना।
- पारम्परिक ज्ञान के संरक्षण के लिए उनका अभिलेखीकरण करना।
- जन भागीदारी के माध्यम से पुर्नचक्रीकरण, पुनर्उपयोग, जैविक खाद निर्माण, वाहन प्रदूषण नियंत्रण एवं ठोस अपशिष्ट प्रबंधन आधारित ऊर्जा उत्पादन को प्रोत्साहित करना।
- पर्यावरणीय कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करना।
- पर्यावरण प्रदूषण के मामलों के त्वरित परीक्षण/निस्तारण हेतु विशिष्ट अदालतों का गठन।
- पर्यावरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान हेतु पर्यावरण पुरस्कारों की स्थापना।
- विनिर्दिष्ट सार्वजनिक दायित्वों जैसे सीवेज और उत्प्रवाह उपचार संयंत्रों के संचालन आदि में बिल्ड, ओन और आपरेट के सिद्धान्त के आधार पर सार्वजनिक–निजी–स्वैच्छिक संगठन सहभागिता सुनिश्चित करना।

6.7 प्राकृतिक संसाधन लेखाकरण :

- प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि, जल और वन इत्यादि की स्थिति और उपलब्धता को दर्शाते हुए प्रत्येक वर्ष एक प्राकृतिक संसाधन बजट तैयार किया जायेगा, जिसके आधार पर पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास के सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य में इन संसाधनों के भावी उपयोग की रूप–रेखा तैयार की जा सकेगी। इस बजट के माध्यम से यह भी ज्ञात हो सकेगा कि हमारी विकास नीतियाँ एवं परियोजनाएं पर्यावरणीय संसाधनों की गुणवत्ता और उत्पादकता को किस प्रकार प्रभावित कर रही हैं।

6.8 पर्यावरणीय – आडिट :

- विकास परियोजनाओं और उद्योगों का पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का विशेषकर प्रदूषण नियंत्रण सम्बन्धी मानकों के अनुपालन और अपशिष्ट पदार्थों के उत्पादन तथा पुनर्चक्रण के संदर्भ में मूल्यांकन करने हेतु पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा एक " पर्यावरण–कथन" की प्रक्रिया लागू की गई है। यही प्रक्रिया प्रदेश की महत्वपूर्ण विकास योजनाओं एवं प्रदेश में स्थापित होने वाले उद्योगों में भी लागू की जाएगी। पर्यावरण–कथन का उपयोग सम्बन्धित उद्योग अथवा निकाय की पर्यावरण को कुप्रभावित करने वाली विशिष्ट नीतियों अथवा गतिविधियों की पहचान करने तथा निदानात्मक उपाय करने में किया जा सकेगा। पर्यावरण–कथन का विस्तार पर्यावरणीय आडिट तक किया जायेगा। इससे विकास एवं औद्योगिक गतिविधियों को पर्यावरण संगत बनाया जा सकेगा। इसके अतिरिक्त पर्यावरण प्रबन्ध प्रणालियों विशेषकर आई. एस. ओ.:14001 को बढ़ावा दिया जाएगा एवं प्रबन्ध प्रणाली युक्त संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाएगा।

6.9 पर्यावरण प्रबंध तंत्र का सुदृढ़ीकरण और विकास विभागों में पर्यावरणीय प्रकोष्ठ की स्थापना :

- प्रदेश की व्यापक पर्यावरणीय आवश्यकताओं को पूरा करने को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरण विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण में पर्यावरण निदेशालय एवं उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड कार्यरत है। इनका सुदृढ़ीकरण किया जाना होगा।
- योजना के विरचन के समय ही पर्यावरणीय पहलुओं का विभिन्न विकास योजनाओं में समावेश करने के लिए प्रत्येक विकास विभाग में एक पर्यावरणीय प्रकोष्ठ की स्थापना किये जाने की आवश्यकता है। यह प्रकोष्ठ अपने विभाग की योजनाओं के कियान्वयन से पूर्व उनका पर्यावरण की दृष्टि से अध्ययन करके योजनाओं में उन पर्यावरणीय पहलुओं का समावेश कराना सुनिश्चित करेगा जिससे पर्यावरण का अपघटन कम से कम हो। विभाग की योजनायें नियोजन, वित्त या पर्यावरण विभाग को इस प्रकोष्ठ की सहमति प्राप्त करने के उपरान्त ही प्रेषित की जायं। यह प्रकोष्ठ, योजनाओं के कियान्वयन के उपरान्त भी योजनाओं का पर्यावरण की दृष्टि से मूल्याँकन करेगा ताकि विकास कार्यों से जो प्रभाव पर्यावरण पर पड़ा, उसकी जानकारी हो सके, जिसका भविष्य के लिए नीति बनाने में, भविष्य में चलाई जाने वाली योजनाओं के कियान्वयन में तथा पर्यावरण सुधार के लिए उपयोग किया जा सके।

6.10 विकास परियोजनाओं में पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार के कार्यों हेतु पृथक रूप से बजट प्राविधान :

पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित विविध कार्य यथा प्राकृतिक संसाधनो का संरक्षण, पारिस्थितिकीय संवर्धन, प्रदूषण नियंत्रण तथा अनुसंधान आदि दीर्घकालीन होते हैं। इस दृष्टि से वित्तीय संसाधनों की भरपूर उपलब्धता एवं निरन्तरता महत्वपूर्ण है। वर्तमान में विकास विभागों को जो बजट आवंटित किया जाता है, उसका कोई भी अंश पर्यावरण संरक्षण के कार्यों हेतु सामान्यतः पृथक से चिन्हित नहीं किया जाता है, परिणामस्वरूप विकास विभागों द्वारा अपने परम्परागत विकास कार्यों को ही प्राथमिकता दी जाती है तथा पर्यावरण संरक्षण कार्यक्रमों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। इसका सीधा प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। अतः प्रदेश में पर्यावरण संगत विकास की प्रक्रिया को तेजी से लागू करने के लिए प्रत्येक विकास विभाग को आवंटित बजट में से कुछ अंश पर्यावरण संरक्षण कार्यों के लिये चिन्हित कर दिया जाय, जिसका उपयोग केवल पर्यावरण के कार्यों हेतु ही किया जा सके। प्रत्येक विकास विभाग में अवंटित बजट का प्रतिशत अलग–अलग होगा क्योंकि विकास कार्यों की प्रकृति भिन्न–भिन्न होती है।इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निम्नांकित उपाय किये जाने आवश्यक हैं :–

- पर्यावरण से संबंधित विविध कार्यो यथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, पारिस्थितिकीय संवर्धन, प्रदूषण नियंत्रण तथा अनुसंधान इत्यादि हेतु वित्तीय संसाधनों की समुचित उपलब्धता सुनिश्चित करने के आलोक में विकास विभागों को आवंटित बजट में से पर्यावरण संरक्षण कार्यों के लिये पृथक धन आवंटन सुनिश्चित किया जाना और उसका व्यय केवल पर्यावरण के कार्यो हेतु ही किया जाना।
- पर्यावरण संरक्षण के लिये आवंटित बजट के सापेक्ष व्यय की समीक्षा पर्यावरण विभाग द्वारा किया जाना।

6.11 औद्योगिक एवं विकास परियोजनाओं का पर्यावरणीय प्रभाव मूल्याँकन कराया जानाः

- पर्यावरण एव ंवन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा **V** के प्राविधानों के अन्तर्गत निर्गत पर्यावरण प्रभाव मूल्यॉकन अधिसूचना, 2006 (यथा संशोधित) में यह व्यवस्था की गयी है कि उसकी अधिसूचना की अनुसूची में उल्लिखित समस्त नयी परियोजनाओं में निर्माण कार्य प्रारम्भ करने, विद्यमान परियोजनाओं की क्षमता में वृद्धि के साथ विस्तारीकरण और आधुनिकीकरण तथा उनके मिश्रित–उत्पाद में किसी परिवर्तन किये जाने से पूर्व पर्यावरणीय सहमति प्राप्त की जानी होगी। अधिसूचना की अनुसूची में श्रेणी –बी के अन्तर्गत उल्लिखित परियोजनाओं के संबंध में पूर्व–पर्यावरणीय सहमति जारी करने हेतु पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अधिसूचना दिनांक 12–7–2007 के माध्यम से उत्तर प्रदेश राज्य के लिए राज्य स्तरीय विशेषज्ञ मूल्यॉकन समिति तथा राज्य पर्यावरण प्रभाव निर्धारण प्राधिकरण का गठन किया गया है। उ0प्र0 शासन द्वारा समिति और प्राधिकरण के सचिवालय के रूप में कार्य करने हेतु पर्यावरण निदेशालय, उ0प्र0 लखनऊ को सचिवालय घोषित किया गया है। प्रदेश सरकार द्वारा प्राधिकरण एवं समिति के सचिवालय को समस्त वित्तीय एवं अन्य सुविधाए उपलब्ध करायी जायेगीं।

6.12 पर्यावरण अपघटन का उत्तरदायित्व :

- अपघटित पर्यावरण की पुर्नस्थापना और प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण का दायित्व मौलिक रूप से अपघटन/प्रदूषणकर्ता का है। इसलिए प्रदूषणकर्ता द्वारा पर्यावरणीय अपघटन/प्रदूषण की लागत को वहन किये जाने संबंधी सिद्धान्त को लागू किया जायेगा।

6.13 अन्तर्विभागीय सहयोग :

- पर्यावरण संरक्षण वस्तुतः एक क्रास सेक्टोरल विषय है और इस कार्य में प्रदेश के विभिन्न विभागों, निकायों एवं संगठनों का सक्रिय योगदान आवश्यक होगा। राज्य पर्यावरण नीति के क्रियान्वयन में पर्यावरण विभाग की केन्द्रीय भूमिका होगी एवं नीति के विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विभिन्न विभागों एवं निकायों से समन्वय तथा दिये गये दिशा– निर्देशों का अनुपालन सुनिश्चित कराये जाने की कार्यवाही पर्यावरण विभाग द्वारा की जायेगी।

7. नीति की पुनरीक्षा

- नवीन ज्ञान और विकास के संदर्भ में राज्य पर्यावरण नीति का प्रत्येक तीन वर्षो के पश्चात पुनरीक्षण किया जा सकेगा।

8. **पर्यावरण नीति के क्रियान्वयन की समीक्षा**

पर्यावरण नीति के क्रियान्वयन की समीक्षा हेतु निम्नवत् कार्यवाही की आवश्यकता हैः–

- क्रियान्वयन की समीक्षा हेतु मा0 मुख्यमंत्री जी की अध्यक्षता में राज्य पर्यावरण संरक्षण परिषद का गठन ।
- कार्य–योजनाओं की समीक्षा हेतु मा0 पर्यावरण मंत्री जी की अध्यक्षता में समन्वय समिति का गठन।
- विभिन्न विभागों द्वारा प्रत्येक रणनीतिक विषयों के अधीन समयबद्ध कार्यकारी योजनाओं का विरचन और क्रियान्यवन एव प्रमुख सचिव, पर्यावरण विभाग द्वारा उनकी समीक्षा/अनुश्रवण।

पर्यावरण नीतियॉ और कानून

1– **नीतिगत** : राष्ट्रीय वन नीति 1988; राष्ट्रीय जल नीति 2002; पर्यटन विकास नीति, 1990; राष्ट्रीय जनसंख्या नीति,2000, प्रदूषण उपशमन संबंधी नीति वक्तव्य, 1992; राष्ट्रीय संरक्षण नीति और पर्यावरण एवं विकास पर नीति वक्तव्य, 1992; राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006, उत्तर प्रदेश राज्य वन नीति, 1998; उत्तर प्रदेश राज्य खनिज नीति, 1998; उत्तर प्रदेश राज्य पर्यटन नीति, 1999 ; उत्तर प्रदेश कृषि नीति, 1999 और उत्तर प्रदेश जल नीति, 1999।

2 **विधिक** :

(अ) जल–प्रदूषण : नदी बोर्ड अधिनियम, 1966 ; मर्चेंट शिपिंग अधिनियम, 1970 ; जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974 (संशोधित 1988), जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) नियम, 1975; जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) उप कर अधिनियम, 1977 (1997 व 2003 में संशोधित) ; जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) उप–कर नियमावली, 1978; उ0 प्र0 जल (व्यावसायिक उत्प्रवाह एवं सीवेज निस्तारण सहमति) नियमावली 1981।

(आ) वायु प्रदूषण : भारतीय ब्रायलर्स अधिनियम, 1929 ; मोटर वाहन अधिनियम, 1939 (1988 में संशोधित) ; कारखाना अधिनियम, 1948 (1987 में संशोधित) ; औद्योगिक (विकास और नियमन) अधिनियम, 1951 ; खान एवं खनिज (नियमन एवं विकास) अधिनियम, 1957 (1986 में संशोधित); वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 (1987 में संशोधित) ; वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) नियमावली, 1982 ; राष्ट्रीय परिवेशीय वायु गुणवत्ता मानक अधिसूचना, 1994।

(इ) वानिकी एवं जीव–जन्तु : वन्य जन्तु एवं पक्षी (सुरक्षा) अधिनियम, 1912; भारतीय मत्स्य अधिनियम, 1927; भारतीय वन अधिनियम, 1927; जीव–जन्तु क्रूरता निवारण अधिनियम, 1960; जीव–जन्तु क्रूरता निवारण नियम, 2001, प्राणि उद्यान स्थापना नियम, 1992, राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश लघु वन उपज अधिनियम, 2005, वन भूमि को अन्य उपयोगों में परिवर्तन हेतु मार्गदर्शिकायें, 1994, वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972; उ0 प्र0 ग्रामीण और पर्वतीय क्षेत्र वृक्ष संरक्षण अधिनियम, 1976; उ0 प्र0 इमारती लकड़ी एवं अन्य उपज अभिवहन नियमावली, 1978, वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 (1988 में संशोधित); वन संरक्षण नियमावली, 2003, जैव विविधता अधिनियम, 2002, वन्य जीव (सुरक्षा) नियम, 1995, पंचायत (अनुसूचित सूचित क्षेत्रों तक विस्तार), अधिनियम, 1996, जैव विविधता नियम, 2004।

(ई) विकिरण : परमाणु ऊर्जा अधिनियम, 1962 ; विकिरण सुरक्षा नियमावली, 1971।

(उ) कीटनाशक : विष अधिनियम, 1919; कारखाना अधिनियम, 1948 (1987 में संशोधित) ; उ0 प्र0 कृषि व्याधि एवं कीट नियंत्रण अधिनियम, 1954; कीटनाशक अधिनियम, 1968।

(ऊ) सामान्य पर्यावरण : पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986, पेंटेन्ट अधिनियम, 1970, परिसंकटमय रसायन विनिर्माण, भंडारण एवं आयात नियमावली, 1989 (2000 में संशोधित), पर्यावरण (संरक्षण) नियमावली, 1986, ध्वनि (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण)नियम, 2000 (संशोधित 2002), परिसंकटमय अपशिष्ट (प्रबंधन एवं हथालन) नियमावली, 1989 (संशोधित 2003), परिसंकटमय सूक्ष्म जीव वंशानुगत प्रभावित सूक्ष्म–जीव या कोशिका विनिर्माण प्रयोग, आयात एवं निर्माण भण्डारण नियमावली, 1989, लोक दायित्व बीमा अधिनियम, 1991 (संशोधित 1992), लोक दायित्व बीमा नियम, 1991 (संशोधित 1993), पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन अधिसूचना, 1994 (यथा संशोधित 2006), राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण अधिनियम, 1995, राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलेट अथारिटी अधिनियम, 1997, पुनः चक्रीय प्लास्टिक विनिर्माण और उपयोग नियमावली, 1999 (संशोधित 2003), बायो मेडिकल वेस्ट (प्रबन्धन और हथालन) नियम, 1998 (संशोधित 2003) पर्यावरण (औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना) नियमावली, 1999, बैट्रीज (प्रबन्धन और हथालन) नियम, 2001, नगरीय ठोस अपशिष्ट (प्रबन्धन और हथालन) नियम, 2000, केन्द्रीय भूमि जल परिषद प्राधिकरण, 1997 (संशोधित 2000), फ्लाई ऐश के सन्निक्षेपण और व्ययन संबंधी अधिसूचना, 1999 (संशोधित 2003), इको मार्क अधिसूचना, 1991, सौन्दर्य प्रसाधनों की पर्यावरण मित्र लेबेलिंग अधिसूचना,1992, रासायनिक दुर्घटना (आकस्मिकता नियोजन और तैयारी) नियमावली, 1996, ओजोन अवक्षयकारी पदार्थ (विनियमन एवं नियंत्रण), नियम, 2000।

परिशिष्ट–2

प्रदेश की पर्यावरणीय समस्यायें–एक परिदृश्य

हमारे प्रदेश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 2.42 लाख वर्ग कि0मी0 है, जो कि देश के कुल भूभाग का लगभग 7.3 प्रतिशत है, जबकि देश की लगभग 16.2 प्रतिशत जनसंख्या यहॉ निवास करती है। प्रदेश की लगभग 22 प्रतिशत जनसंख्या शहरों और कस्बों में तथा लगभग 78 प्रतिशत जनसंख्या गॉवों में निवास करती है। वर्ष 1951 में प्रदेश की आबादी 6.32 करोड़ थी, जो कि वर्ष 1991 में 13.20 करोड़ हो गयी। वर्ष 2001 में प्रदेश की जनसंख्या लगभग 16.62 करोड़ थी। वर्ष 2009 में 18.00 करोड़ एवं वर्ष 2011 में 20.00 करोड़ से अधिक आबादी का अनुमान लगाया गया है। वर्ष 1991 से 2001 के दशक में 25.80 प्रतिशत की वृद्धि हुई। प्रदेश में जनसंख्या घनत्व 690 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 है, जो कि राष्ट्रीय औसत 325 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 के दो गुने से भी अधिक है, जिससे सीमित भूमि और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव बढ़ा है।

राज्य की आय में हो रही बढ़ोत्तरी के बावजूद उसका बड़ा भाग जनसंख्या वृद्धि के कारण निष्प्रभावी हो जाता है। फलस्वरूप सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि के बावजूद राष्ट्रीय औसत रू0 25,716–00 के विपरीत प्रदेश में प्रति व्यक्ति आय रू0 13,316–00 (वर्ष 2005–06) रही। राष्ट्रीय औसत 28.7 प्रतिशत के विपरीत वर्ष 2004–05 में प्रदेश में गरीबी की रेखा के नीचे 33.90 प्रतिशत लोगों को जीवन यापन करने वाला पाया गया। यद्यपि जनसंख्या विकास के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन है, लेकिन जब यह पारिस्थितिकीय तंत्र की वाहक क्षमता से अधिक हो जाती है तब यह पर्यावरण अपघटन का एक प्रमुख कारण बन जाती है। जनसंख्या नियंत्रण में साक्षरता का योगदान है। राष्ट्रीय औसत 64.8 प्रतिशत के समक्ष वर्ष 2001 में प्रदेश में साक्षरता का स्तर 56.3 प्रतिशत आंकलित किया गया था और महिलाओं में साक्षरता प्रतिशत 42.2 प्रतिशत ही पाया गया था। स्कूली शिक्षा के प्रसार हेतु किये गये प्रयासों के फलस्वरूप वर्ष 2004–05 में प्रदेश में साक्षरता 71 प्रतिशत हो गयी। महिला साक्षरता एवं परिवार नियोजन का घनिष्ट संबंध है। जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण संरक्षण के लिए अभिशाप है। हमारे प्रदेश की वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर, बढ़ती आबादी से जनित पर्यावरणीय समस्याओं पर तत्काल कार्यवाही करने की आवश्यकता की ओर इंगित करती है।

हमारे प्रदेश का लगभग 68.55 (2006–07) प्रतिशत भूभाग कृषि कार्यों हेतु उपयोग में लाया जाता हैं। कृषि राज्य की अर्थव्यस्था का प्रमुख अवयव है, क्योंकि इससे राज्य की कार्यशील जनसंख्या को रोजगार मिलता है। वर्ष 1950–51 में सकल खाद्यान्न उत्पादन 117.75 लाख टन था, जो कि वर्ष 2005–06 में बढ़कर 405.28 लाख टन हो गया। इस वृद्धि में रसायनिक उर्वरको के प्रयोग का योगदान है। वर्ष 1950–51 में रसायनिक उर्वरक की खपत 1.06 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर थी, जो कि वर्ष 2005–06 में बढ़कर 151 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर हो गयी। वर्ष 1950–51 में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम (एन0पी0के0) का अनुपात क्रमशः 1.03, 0.03 और 0 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर था, जबकि वर्ष 2005–06 में यह बढ़कर क्रमशः 107, 35 और 9 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर हो गया। कृषि विशेषज्ञों के अनुसार एन0पी0के0 का पारस्परिक अनुपात 4:2:1 होना चाहिए जबकि वर्ष 2005–06 में यह अनुपात लगभग 12:4:1 हो गया। इसके साथ ही जैविक खाद के उपयोग में भी चिन्ताजनक ढंग से गिरावट हुई है। फलस्वरूप भूमि की उर्वरता तथा उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, इसके अलावा मृदा का न्यूट्रियेन्ट बैलेन्स भी प्रभावित हुआ है।

रोजगार की तलाश में ग्रामीणों का पलायन शहरों की जनसंख्या वृद्धि का एक प्रमुख कारण है, जिससे शहरों के आकार में वृद्धि के कारण समीपवर्ती क्षेत्रों की कृषि भूमि का अन्य उपयोगों के लिए भी परिवर्तन हो रहा है। लगभग 11.3 प्रतिशत भूमि का उपयोग गैर कृषि कार्यो में होता है। विकास एवं औद्योगिक परियोजनाएं भी उपजाऊ कृषि भूमि को समाप्त कर रही हैं, जिससे कुल कृषि उत्पादन में कमी आना स्वाभाविक है । खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए सघन कृषि के कारण रसायनिक उर्वरकों तथा कीट नाशकों का प्रयोग बढ़ा है, जिससे भूमि की उत्पादक क्षमता में कमी, कीड़ों में कीटनाशक प्रतिरोधकता तथा जल एवं मृदा संसाधनों का प्रदूषण जैसी समस्याएं उत्पन्न हुईं हैं। इसलिए पर्यावरण संगत प्रौद्योगिकी पर आधारित कृषि की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत जैविक खाद, जैविक कीट नाशक के उपयोग, कृषि रसायनों का संतुलित उपयोग एवं उचित जल तथा भूमि प्रबन्धन इत्यादि को अपनाया जाना आवश्यक है।

राज्य में लगभग 2.00 प्रतिशत कृष्य बेकार भूमि तथा लगभग 2.2 प्रतिशत ऊसर और खेती के अयोग्य भूमि तथा लगभग 9.0 प्रतिशत भूमि कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग जैसे चारागाह, वृक्षों, झाड़ियों एवं अन्य परती भूमि के अंतर्गत आती है। उचित भूमि एवं जल संरक्षण तकनीकों तथा वृक्षारोपण द्वारा इस प्रकार की भूमि को उत्पादक प्रयोग के अंतर्गत लाया जा सकता है।

वायु प्रदूषण के कारण प्रति वर्ष असंख्य लोग स्वास्थ्य सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं से पीड़ित हो रहे हैं। वायु प्रदूषण के कारण ही पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो रही है, जिसका परिणाम विश्वव्यापी जलवायु में व्यापक परिवर्तन, सूखा और बाढ़, तथा असंख्य जैव प्रजातियों के विलुप्त होने के रूप में परिलक्षित हो रहा है। पृथ्वी के जीवमण्डल के रक्षा कवच के रूप में लगभग 10 से 50 किलोमीटर की ऊँचाई तक विद्यमान ओजोन परत के क्षरण से सूर्य से आनेवाले घातक पराबैंगनी विकिरण की मात्रा में वृद्धि सम्पूर्ण विश्व के लिए गंभीर चिन्ता का विषय है।

जल प्रदूषण और स्वच्छ जल की कमी के कारण असंख्य लोग प्रति वर्ष हैजा, पीलिया, टाइफायड, पेचिश और कृमि रोग इत्यादि से पीड़ित हो रहे हैं तथा मत्स्य सम्पदा में भी कमी हो रही है। रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग से मृदा और जल प्रदूषण के अलावा फलों, सब्जियों और अन्न के माध्यम से कीटनाशक ''खाद्य श्रृंखला'' में पहुँच कर जनस्वास्थ्य एवं पारिस्थितिकी पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण वनों पर जैविक दबाव में अत्यधिक वृद्धि होने से जैव विविधता में कमी के अलावा खाद्य आपूर्ति, लकड़ी के स्रोत, औषधि, ऊर्जा, पर्यटन और मनोरंजन के अवसर प्रभावित हो रहे हैं। इसका प्रभाव सूक्ष्म जलवायु, जल की उपलब्धता और मृदा के संरक्षण पर भी पड़ रहा है। पर्यावरणीय समस्याएं प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से जन जीवन को प्रभावित कर रही हैं।

सघन कृषि हेतु सिंचाई एवं ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में घरेलू उपयोग हेतु जल की बढ़ी माँग के कारण भूगर्भ जल संसाधनों पर अत्यधिक दबाव बढ़ा है, जिसका कुप्रभाव अनेक क्षेत्रों में भूगर्भ जल स्तर में निरन्तर गिरावट के रूप में सामने आ रहा है। भूगर्भ जल विभाग द्वारा किये गये अध्ययन के अनुसार लखनऊ,कानपुर, आगरा, अलीगढ़, वाराणसी, मथुरा और गाजियाबाद नगरों में भूगर्भ जल स्तर में गिरावट की वार्षिक दर 22 से 56 से0मी0 तक पायी गयी है। इसके अलावा प्रदेश के लगभग 100 विकास खण्डों में भूगर्भ जल स्तर में निरन्तर गिरावट हो रही है। इसके विपरीत प्रदेश के कुछ भागों विशेषकर गन्डक और शारदा सहायक नहर समादेश क्षेत्रों में भूगर्भ जल के उपयोग में कमी और भूगर्भ जल रिचार्ज में वृद्धि के फलस्वरूप जल–प्लावन की समस्या उत्पन्न हुई है, जिससे इन क्षेत्रों का पर्यावरण कुप्रभावित हो रहा है। भूजल सम्पदा के असन्तुलित उपयोग की परिधि में भूक्षरण, भूस्खलन, खारीपन और ऊसर तथा बाढ़ की समस्याएं प्रकट होती हैं। इन समस्याओं के निदान हेतु सतही और भूगर्भ जल के समन्वित उपयोग किये जाने की आवश्यकता है।

पारिस्थितिकीय संतुलन और जैव विविधता संरक्षण में वनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार 33 प्रतिशत क्षेत्र वनाच्छादित होना चाहिए। इसके विपरीत प्रदेश का अभिलिखित वन क्षेत्र लगभग 9.01 प्रतिशत (राष्ट्रीय औसत 23.4 प्रतिशत) है। उपग्रहीय चित्रों के अनुसार प्रदेश में वास्तविक वनावरण 5.86 प्रतिशत है। प्रदेश के केवल 2 जनपदों सोनभद्र और चन्दौली में वन क्षेत्र 20 प्रतिशत से अधिक है परन्तु 6 जनपदों में 15–20 प्रतिशत, 5 जनपदों में 10–15 प्रतिशत, 5 जनपदों में 5–10 प्रतिशत, 9 जनपदों में 3–5 प्रतिशत तथा 33 जनपदों में 1 से 3 प्रतिशत तक ही वन क्षेत्र विद्यमान है। 10 जनपदों में तो वन क्षेत्र 1 प्रतिशत से भी कम है। राज्य में वनों का असमान वितरण (तराई और मैदानी भागों में बहुत ही विरल वनाच्छादित क्षेत्र है) एवं राष्ट्रीय औसत से कम वन क्षेत्र एक प्रभावी वन प्रबन्धन योजना एवं व्यापक वृक्षारोपण की आवश्यकता दर्शाता है।

जैव विविधता की दृष्टि से प्रदेश को पॉच क्षेत्रों जैसे तराई, गंगा–यमुना का मैदान,विन्ध्य एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश (मुख्यतः चम्बल एवं यमुना का बीहड़ क्षेत्र) और भाभर में विभक्त किया जा सकता है। ये सभी क्षेत्र विभिन्न प्रकार के जैविक दबावों के अधीन हैं तथा विभिन्न स्तर के क्षरण एवं अपघटन की समस्या से ग्रस्त हैं। प्रदेश में विभिन्न प्रकार के पौधों की कुल 3987 प्रजातियों की पहचान की जा चुकी है। इनमें से 300 प्रजातियॉ औषधीय दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं और देश एवं विदेश में व्यापक मॉग के कारण इनके वाणिज्यिक उत्पादन की अपार सम्भावनाए हैं। इसी प्रकार पक्षियों की 552 प्रजातियों की पहचान की गयी है, जिसमें से 24 पक्षी प्रजातियॉ विश्वव्यापी लुप्त प्राय श्रेणी तथा 50 प्रजातियां दुर्लभ श्रेणी में आती हैं।यद्यपि सारस को राज्य पक्षी के रूप में घोषित किया गया है और इटावा, एटा,अलीगढ़ और मैनपुरी जनपदों में सम्पूर्ण विश्व के लगभग 20 प्रतिशत सारस पाये जाते हैं परन्तु नम भूमि के समुचित संरक्षण के

अभाव में इनकी प्रजाति भी संकटग्रस्त है। इनके अलावा 47 सरीसृप, 19 उभयचर एवं 79 मत्स्य प्रजातियों की पहचान की गयी है। गंगा नदी में पायी जाने वाली स्तनधारी प्रजाति गंगा डाल्फिन, जिसे स्थानीय लोग सु–सू के नाम से भी पुकारते हैं, भी लुप्तप्राय श्रेणी में आती है।

जैव विविधता संरक्षण हेतु प्रदेश में 1 राष्ट्रीय उद्यान, 11 वन्य जीव विहार एवं 12 पक्षी विहार स्थापित हैं, जिनका कुल क्षेत्रफल लगभग 5521 वर्ग कि0मी0 (प्रदेश के कुल भूभाग का 2.16 प्रतिशत) है। अनेक संरक्षित क्षेत्र दीर्घकालिक सम्पोषण की दृष्टि से आकार में काफी छोटे हैं। 23 संरक्षित क्षेत्रों के अन्तर्गत 11 संरक्षित क्षेत्रों में से प्रत्येक का क्षेत्रफल 12 वर्ग कि0मी0 से भी कम हैं। प्रदेश के प्रमुख वन्य जीवों के अन्तर्गत बाघ, हाथी, गैंडा, बारहसिंघा, हिरन, सुइस (डाल्फिन), घड़ियाल, अजगर एवं लगभग 552 प्रजातियों के पक्षी हैं । भविष्य में जैव विविधता पर आधारित औद्योगिक विकास की संभावना है। ऐसा विकास न केवल जैविक सम्पदा को प्रभावित करेगा, बल्कि स्थानीय आबादी , जिसका निर्वाह अधिकतर इन्हीं संसाधनों पर निर्भर करता है, को भी प्रभावित करेगा। अतएव राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के अनुरूप जैव विविधता संरक्षण के लिए आरक्षित वन क्षेत्रों की सुरक्षा एवं संवर्द्धन हेतु आन्तरिक एवं बाह्य प्रयासों की आवश्यकता है।

प्राकृतिक संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (आई0यू0सी0एन0) द्वारा विश्व में 1758 नम भूमियों को रैमसर सूची में रखा गया है, जिनमें से 25 स्थल देश में चिन्हित किये गये हैं और केवल 1 स्थल प्रदेश में चिन्हित किया गया है जो कि गंगा नदी में बृजघाट से नरोरा तक है। राष्ट्रीय नम भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत 9 नम भूमि प्रदेश में चिन्हित की गयी हैं। इसके अलावा रिमोट सेन्सिग एप्लीकेशन सेन्टर, उ0प्र0 द्वारा लगभग 2.25 हेक्टेयर क्षेत्रफल से अधिक क्षेत्रफल वाली 23114 नम भूमि चिन्हित की गयी हैं। इसके अलावा 2.25 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल वाली 97,552 नम भूमि चिन्हित की गई हैं। इस प्रकार रिमोट सेंसिंग एप्लीकेशन सेन्टर द्वारा कुल 1,20,666 नम भूमि चिन्हित की गई है। राजस्व परिषद् द्वारा वर्ष 2008 में कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार प्रदेश में लगभग 9.15 लाख नम भूमि हैं, जिनका कुल क्षेत्रफल 6.07 लाख हेक्टेयर है और वर्ष 1952 में इनकी संख्या 9.59 लाख और इनका कुल क्षेत्रफल 6.21 लाख हेक्टेयर था। इसका तात्पर्य है कि लगभग 44,000 नम भूमि संरक्षण के अभाव में समाप्त हो चुकी हैं। वर्तमान में उपलब्ध 9.15 लाख नम भूमि में से भी लगभग 1.6 लाख अतिक्रमण से ग्रस्त हैं। कृषि, आवास एवं अन्य आर्थिक गतिविधियों हेतु भूमि की मांग, सिल्टिंग तथा अतिक्रमण इत्यादि के कारण नम भूमि का अस्तित्व धीरे–धीरे संकटग्रस्त हो रहा है। पारिस्थितिकीय संतुलन की दृष्टि से नम भूमियों का संरक्षण आवश्यक है।

रोजगार के अभाव में शहरों की ओर पलायन आदि कारणों से शहरों की आबादी भी निरन्तर बढ़ती जा रही है, जिससे शहरी क्षेत्र मलिन बस्तियों के प्रसार (शहरी आबादी का लगभग 21 प्रतिशत), ठोस अपशिष्ट निस्तारण, उत्प्रवाह उपचार की समुचित व्यवस्था के अभाव में जल प्रदूषण, यातायात दबाव के कारण ध्वनि और वायु प्रदूषण, स्वास्थ्य समस्यायें, पेयजल की कमी, उर्जा की अधिक खपत व आवासीय सुविधाओं हेतु उपजाऊ भूमि का प्रयोग जैसी पर्यावरणीय समस्याओं का सामना कर रहे हैं। नगरीय ठोस अपशिष्टों, जैव चिकित्सा अपशिष्टों और औद्योगिक परिसंकटमय अपशिष्टों के संग्रह, परिवहन, उपचार और निस्तारण की समुचित व्यवस्था न होने से पर्यावरणीय गुणवत्ता, विशेषकर मृदा और भूगर्भ जल कुप्रभावित हो रहे हैं। विश्व बैंक द्वारा वर्ष 2003 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश के समस्त नगरपंचायतों, नगरपालिकाओं और नगर निगमों से लगभग 20820 मीट्रिक टन प्रतिदिन की दर से ठोस अपशिष्ट जनित होता है, जिसके संग्रह, पृथक्करण, परिवहन एवं निस्तारण की समुचित व्यवस्था विद्यमान नहीं है। विभिन्न नगरों में ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन हेतु परियोजनाएं प्रस्तावित की गयीं हैं, जिनके त्वरित गति से कियान्वयन की आवश्यकता है। केन्द्रीय प्रदूषण नियत्रंण बोर्ड द्वारा वर्ष 2000 में किए गये आंकलन के अनुसार प्रदेश में प्रतिदिन 20.7 मीट्रिक टन जैव–चिकित्सकीय अपशिष्ट जनित होता है, जिनके उपचार हेतु प्रदेश में 14 सुविधाएं विकसित हो चुकी हैं। प्रदेश के 3736 चिकित्सालयों और नर्सिंग होम में से 2916 के पास उपचार की सुविधाएं उपलब्ध हैं। अभी भी काफी मात्रा में अपशिष्ट के समुचित उपचार की व्यवस्था की जानी है। विभिन्न नगरीय क्षेत्र जैसे लखनऊ, कानपुर, आगरा, आनपारा, गजरौला, गाजियाबाद, वाराणसी और नोएडा इत्यादि वायु प्रदूषण की समस्या से ग्रस्त हैं। परिवेशीय वायु गुणवत्ता के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि इन समस्त शहरों में परिवेशीय वायु में निलम्बित धूल पिंड की मात्रा निर्धारित मानक (200 माइको ग्राम/घनमीटर) से काफी अधिक है।

प्रदेश में मोटर वाहनों की संख्या में हो रही निरंतर वृद्धि के कारण ''वाहन प्रदूषण'' नगरीय क्षेत्रों में वायु प्रदूषण का प्रमुख हिस्सा बन गया है। वर्ष 1985–86 से वर्ष 2006–07 के दो दशकों में वाहनों, विशेषकर निजी वाहनों की संख्या में

अभूतपूर्व वृद्धि पायी गयी है। इन दो दशकों में निजी कारों, दो पहिया वाहनों, ट्रकों, ट्रैक्टरों एवं अन्य वाहनों की संख्या में क्रमशः 934.1, 1203.25, 312.06, 383.71 एवं 231.74 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसके विपरीत सार्वजनिक वाहनों की संख्या में मात्र 4.89 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वायु प्रदूषण और सड़कों पर यातायात दबाव को कम करने हेतु सार्वजनिक परिवहन की व्यवस्था को सुदृढ़ किये जाने की आवश्यकता है। नगरीय क्षेत्र ध्वनि प्रदूषण की समस्या से भी ग्रस्त हो रहे हैं। उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रदेश के 6 शहरों : लखनऊ, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, झांसी और मेरठ में वर्ष 2008 में किये गये अध्ययन के अन्तर्गत ध्वनि प्रदूषण का स्तर आवासीय क्षेत्रों में दिन और रात के समय निर्धारित मानक (55 डेसीबल–दिन/45 डेसीबल–रात) से अधिक पाया गया।

उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा वायु प्रदूषण उत्पन्न करने वाले 2872 उद्योग चिन्हित किये गये हैं, जिनमें से केवल 1479 उद्योगों में मानको के अनुरूप वायु प्रदूषण नियंत्रण व्यवस्था पायी गयी। 103 उद्योगों में वायु प्रदूषण नियंत्रण की व्यवस्था ही विद्यमान नहीं है, जिनमें से 89 उद्योगों के विरूद्ध बोर्ड द्वारा कार्यवाही की जा चुकी है। मध्यम एवं वृहद् स्तर के उद्योग प्रदूषण नियंत्रण व्यवस्था मानकों के अनुरूप होने के बावजूद गंभीर संस्थागत प्रयासों में कमी के कारण वायु, जल एवं ध्वनि प्रदूषण के कारक बन रहे हैं। निम्न तकनीक के प्रयोग करने और संख्या में बहुत अधिक होने के कारण लघु उद्योग भी प्रदूषण की समस्याएं उत्पन्न कर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में खाना बनाने एवं अन्य प्रयोजनों में लकड़ी, गोबर के उपले एवं अन्य जैविक ईंधन का पारंपरिक चूल्हों में प्रयोग घरेलू वायु प्रदूषण का प्रमुख कारण है।

हमारे प्रदेश में जल प्रदूषण की समस्या भी गंभीर है। इसका प्रमुख कारण नगरीय सीवेज के संग्रह, उपचार और निस्तारण की समुचित सुविधाओं का अभाव, औद्योगिक उत्प्रवाह, खुले में शौच और खेती में आवश्यकता से अधिक मात्रा में प्रयुक्त रसायनिक उर्वरक और कीटनाशक हैं। विभिन्न नदियों एवं झीलों में 32 स्थानों पर उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा जनवरी, 2009 में किये गये अध्ययन के अनुसार अधिकांश स्थलों पर जल की गुणवत्ता मानकों के अनुरूप नहीं है। कोलीफार्म बैक्टीरिया के मानक 50(पीने हेतु) /500 (स्नान हेतु)एम0पी0एन0/100 मि0ली0 के विपरीत गंगा नदी में कानपुर (डाउन स्ट्रीम) में 64000, वाराणसी (डाउन स्ट्रीम) में 110000, गाजीपुर (ताड़ीघाट डाउन स्ट्रीम) में 27000, हिन्डन नदी में गाजियाबाद (डाउन स्ट्रीम कुलसरा) में 96000, गोमती नदी में लखनऊ (डाउन स्ट्रीम) में 140000, गाजीपुर (रजवाड़ी) में 27000, जौनपुर (डाउन स्ट्रीम) में 31000 एम0पी0एन0/100 मि0ली0 पायी गयी है। यद्यपि गंगा कार्य योजना और गोमती कार्य योजना के अन्तर्गत विभिन्न नगरों में उत्प्रवाह उपचार संयंत्र लगाये गये हैं परन्तु वे जनित उत्प्रवाह की मात्रा के अनुरूप नहीं है। कानपुर नगर से जनित होने वाले उत्प्रवाह की मात्रा 3600 लाख लीटर प्रतिदिन के समक्ष केवल 1600 लाख लीटर की क्षमता के उत्प्रवाह उपचार संयंत्र स्थापित हैं और अभी भी 2000 लाख लीटर का उपचार किया जाना शेष है। इसी प्रकार लखनऊ नगर के 26 नालों के माध्यम से जनित होने वाले उत्प्रवाह की मात्रा 3200 लाख लीटर प्रतिदिन के समक्ष केवल 420 लाख लीटर प्रतिदिन की क्षमता के उत्प्रवाह उपचार संयंत्र स्थापित हैं। गोमती कार्य योजना–2 के अन्तर्गत 3750 लाख लीटर प्रतिदिन की क्षमता के उत्प्रवाह उपचार संयंत्रों की स्थापना प्रस्तावित है और इनके कार्यशील होने पर गोमती नदी के जल की गुणवत्ता में सुधार होना स्वाभाविक है। उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा वायु और जल प्रदूषण उत्पन्न करने वाले 2872 उद्योग चिन्हित किये गये हैं, जिनमें से केवल 1460 उद्योगों में मानको के अनुरूप उत्प्रवाह का उपचार पाया गया। 492 उद्योगों में उत्प्रवाह उपचार की व्यवस्था ही नहीं पायी गयी है, जिनमें से 299 उद्योगों के विरूद्ध बोर्ड द्वारा कार्यवाही की जा चुकी है।

ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वच्छ पेय जल की समस्या विद्यमान है। भारत सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल आपूर्ति के लिए 150 लोगों के समूह हेतु एक स्त्रोत से 70 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन का मानक निर्धारित किया है। प्रदेश में ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल उपलब्ध कराने हेतु इण्डिया मार्क–2 और पाइप्ड जल आपूर्ति की व्यवस्था लगभग 90 प्रतिशत अधिवासों तक की जा चुकी है। उ0प्र0 जल निगम, आई0टी0आर0सी0 और केन्द्रीय भूमिजल परिषद इत्यादि द्वारा पृथक–पृथक किये गये सर्वेक्षण/अध्ययन के अनुसार उन्नाव, मथुरा,कुशीनगर, मऊ,जौनपुर, बुलन्दशहर, अलीगढ़,आगरा,मैनपुरी,फतेहपुर,बांदा, झांसी, बदायू, फिरोजाबाद, कानपुर नगर, औरेया, महोबा, महामायानगर (हाथरस), हरदोई और गौतमबुद्ध नगर जनपदों में भूजल फ्लोराइड (मानक 1 मि0ग्रा0 प्रति लीटर) से संदूषित है। पेयजल में फ्लोराइड की मात्रा अधिक होने पर स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न समस्यायें जैसे – दातों में पीलापन, छिद्र, हड्डियों का कमजोर पड़ना, जोड़ों और रीढ़ की हड्डी में अकड़न तथा आजीवन अपंगता इत्यादि सम्भव हैं। इसके अलावा औद्योगिक प्रदूषण के फलस्वरूप भूजल में कानपुर और उन्नाव नगरों में

क्रोमियम तथा कानपुर, रायबरेली, इलाहाबाद, जौनपुर और वाराणसी जनपदों में लेड पाया गया है। क्रोमियम संदूषण के फलस्वरूप श्वासनली और फेफड़े का कैंसर, पाचन तंत्र में गड़बड़ी, मधुमेह और मिर्गी इत्यादि बीमारियॉ उत्पन्न होती हैं। लेड अत्यन्त विषाक्त होने के कारण बोन मैरो और हीमोग्लोबिन के बनने को प्रभावित करने के अलावा तंत्रिका प्रणाली संबंधी दोष और एनीमिया इत्यादि बीमारियॉ उत्पन्न करता है। इसके अलावा बलिया, गाजीपुर,चन्दौली, गोरखपुर, बहराइच, लखीमपुर खीरी और बरेली जनपदों में भूजल (20 से 60 मीटर की गहराई पर) आर्सेनिक (मानक 0.05 माइक्रो ग्राम प्रति लीटर) से संदूषित है। आर्सेनिक संदूषण के फलस्वरूप आमाशय और आंत में प्रदाह, लाल और श्वेत रक्त कणिकाओं के स्तर में गिरावट, महिलाओं में बांझपन और गर्भपात, त्वचा कैंसर, फेफड़े का कैंसर, लिवर कैंसर और लिम्फ कैंसर इत्यादि बीमारियॉ उत्पन्न होती हैं। प्रदेश के पश्चिमी और मध्य भागो में अनेक स्थानों पर भूजल नाइट्रेट से भी संदूषित पाया गया है। नाइट्रेट संदूषण के फलस्वरूप आमाशय कैंसर, डाइबिटीज और मिथेमोग्लोबीनीमिया (ब्लू बेबी सिन्ड्रोम) इत्यादि बीमारियॉ उत्पन्न होती हैं। मेरठ, गाजियाबाद, मुरादाबाद, आगरा, इटावा, सीतापुर, बहराइच,गाजीपुर, रायबरेली और बस्ती जनपदों में भूजल मैग्नीज से संदूषित पाया गया है। मैगनीज संदूषण के फलस्वरूप तंत्रिका प्रणाली संबंधी विभिन्न बीमारियॉ उत्पन्न होती हैं। जनस्वास्थ्य की दृष्टि से शुद्ध पेयजल की आपूर्ति हेतु समुचित उपाय किये जाने आवश्यक हैं।

जल, स्वच्छता और स्वास्थ्य का अत्यन्त धनिष्ट संबंध है। प्रदेश में लगभग 80 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है और उसमें से 60 प्रतिशत लोगों के लिए शौचालय की व्यवस्था उपलब्ध नहीं है तथा गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों में से 68 प्रतिशत लोगों के पास यह सुविधा उपलब्ध नहीं है। फलस्वरूप ग्रामीण आबादी के अधिकांश लोग खुले में खेतों/बागों आदि में शौच के लिए जाते हैं जिससे पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या के साथ–साथ बीमारियॉ भी उत्पन्न होती हैं । ग्रामीण क्षेत्रों में सम्पूर्ण स्वच्छता की दृष्टि से जीवन की गुणवत्ता में सुधार, ग्रामीण महिलाओं को सम्मान और एकान्त प्रदान करने हेतु सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान चलाया जा रहा है। वर्ष 2001 की सेन्सस रिपोर्ट के अनुसार सैनीटेशन कवरेज सम्पूर्ण देश में 36.4 प्रतिशत के समक्ष प्रदेश में केवल 19.23 प्रतिशत पाया गया। पंचायत राज विभाग की नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार सैनीटेशन कवरेज यद्यपि 39 प्रतिशत हो गया है परन्तु अभी भी इस क्षेत्र में काफी कार्य किये जाने की आवश्यकता है।

हमारा प्रदेश मानव निर्मित धरोहरों, जो कि प्राचीन वैभव, इतिहास, सभ्यता एवं संस्कृति के परिचायक हैं की दृष्टि से अत्यन्त धनी है, परन्तु इनमें से अनेक प्रदूषण, अतिक्रमण एवं समुचित देखभाल की समस्या से ग्रस्त हैं। देश में आने वाले पर्यटकों में से एक तिहाई पर्यटक प्रदेश में आते हैं। वर्ष 2007 में लगभग 14.61 लाख विदेशी पर्यटक प्रदेश में आये, जिनसे लगभग 4320 करोड़ की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई। पर्यटन उद्योग को बढ.ावा देने की दृष्टि से भी पुरातात्विक धरोहरों के पर्यावरण सुधार की आवश्यकता तापक्रम में हो रही वृद्धि के लिए पेट्रोल, डीजल, कोयला और अन्य ईंधन आदि के जलने से उत्पन्न कार्बन डाई आक्साइड गैस और कूड़ा–करकट के सड़ने, धान के खेतों और पशुओं के भोजन पाचन से उत्पन्न मीथेन गैस तथा कृत्रिम रसायनिक उर्वरकों और जैव–ईंधन के जलने से उत्पन्न नाइट्रस आक्साइड गैस उत्तरदायी हैं। पृथ्वी के तापमान में वृद्धि के कारण जलवायु परिवर्तन का प्रभाव दिखाई देने लगा है। सुन्दर वन क्षेत्र के कुछ द्वीपों में जल स्तर में वृद्धि, गत वर्ष मुम्बई में अत्यधिक वर्षा के कारण भयावह जलमग्न स्थिति, पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश में भयानक चक्रवात, पर्वतीय क्षेत्रों में हिमनदों के पिघलने से उनके आकार में कमी इत्यादि प्रत्यक्ष उदाहरण विद्यमान हैं। इस शताब्दी के अन्त तक तापक्रम में 2 से 4.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि अनुमानित की गयी है, जिससे गर्म हवाओं का बहना, सूखा, बाढ़, आधी–तूफान, चक्रवात और जल की कमी जैसी गम्भीर समस्यायें उत्पन्न होगी। इसका प्रभाव विभिन्न प्रकार की फसलों की उपज पर भी पड़ता है। पूरे विश्व के लिए खतरा बनी जलवायु परिवर्तन की समस्या के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी कार्बन डाई आक्साइड और मीथेन गैसों के उत्सर्जन में कमी लाने के लिए ठोस उपाय करने होंगे।

ग्रीन हाउस गैसों के नियंत्रण में विद्युत ऊर्जा की खपत की प्रमुख भूमिका है। प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत के राष्ट्रीय औसत 600 किलोवाट के समक्ष प्रदेश में 300 किलोवाट की विद्युत खपत हो रही है। प्रदेश की 8500 मेगावाट की विद्युत आवश्यकता के विपरीत अधिकतम 6500 मेगावाट विद्युत उपलब्ध है तथा प्रदेश की अपनी अधिष्ठापित क्षमता केवल 3987 मेगावाट है शेष विद्युत केन्द्रीय आपूर्ति, आयात और सह उत्पादन से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त प्रदेश में 10–15 प्रतिशत की सामान्य हानि के समक्ष वर्ष 2005–06 में 43.27 प्रतिशत वितरण हानि पायी गयी थी। वितरण हानि को कम करके ऊर्जा की आपूर्ति में वृद्धि की जा सकती है।